'कौल-कल्पतरु'
चण्डी
श्रीललिता-सहस्र-नाम
पुष्प ३
प्रकाशक :
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
श्रीचण्डी-धाम
अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

उपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य
अद्भुत दुर्गा सप्तशती	१००)
अलोप-शङ्करी देवी	५)
अघोर-पन्थ का निरूपण	२५)
अध्यात्म-योग	५)
अक्षय-वट	५)
अनुभूत साधना	२५)
आनन्द-लहरी	१२)
आदि-शङ्कराचार्य अङ्क	१०)
आपदुद्धारक श्रीबटुक-भैरव स्तोत्र	१०)
कमला-कल्पतरु, पुष्प-१, २	८०)
काली-पूजा-पद्धति	१००)
काली-नित्यार्चन	१५)
कृष्ण-साधना	२५)
काली-कल्पतरु	३००)
काश्मीर की वैचारिक परम्परा	१०)
कुण्डलिनी-साधना	४०)
कुम्भ-पर्व अङ्क	१०)
गङ्गा-यमुना-सरस्वती पूजा-अङ्क	५)
गायत्री-कल्पतरु	५०)
गुरु-तन्त्र (हिन्दी टीका सहित)	१५)
गुरु-तत्त्व-दर्शन एवं गुरु-साधना	१५)
चक्र-पूजा	३०)
चक्र-पूजा के स्तोत्र	२५)
छिन्न-मस्ता नित्यार्चन	२५)
तत्त्व-विवेचन	३)
तन्त्रोक्त शब्द-ब्रह्म-साधना	४५)
तारा-कल्पतरु	३५)
दकारादि श्री दुर्गा-सहस्त्र-नाम	२०)
दश महा-विद्या-अष्टोत्तर-शत-नामावली	३०)
दश महा-विद्या-अष्टोत्तर-शत-नाम	३०)
दश महा-विद्या-कवच	३०)
दश महा-विद्या-गायत्री एवं ध्यान	३०)
दश महा-विद्या तन्त्र	६०)
दिव्य योग	६)
दीपावली की पूजा-विधि	१५)
दीपावली विशेषाङ्क	४५)
दीक्षा-प्रकाश	३५)
दुर्गा-साधना	१५)
दुर्गा सप्तशती (पद्यानुवाद)	१५)
दुर्गा सप्तशती (विशुद्ध-संस्करण)	२५)
दुर्गा सप्तशती (बीजात्मक)	१०)
दुर्गा-कल्पतरु (निबन्ध व स्तोत्र-संग्रह)	१५)
दुर्गा-सहस्त्र-नाम-साधना	५)
धन-प्राप्ति के प्रयोग	१०)
धर्म-चर्चा	१०)
धर्म-मार्ग पर	३५)
ध्यान-योग एवं विचार-योग	५)
नवरात्र-कल्पतरु	१००)
नवरात्र-पूजा-पद्धति (वैदिक)	३)
नवग्रह-साधना (सचित्र)	१००)
निष्काम योग एवं कर्म-संन्यास योग	१०)
पञ्च-मकार तथा भाव-त्रय	२०)
पारायण-विधि	६)
प्राण-तोषिणी तन्त्र (सर्ग, धर्म-काण्ड)	५०)
बगला-कल्पतरु	१००)
बगला-साधना	४५)
बाला-स्तव-मञ्जरी	२५)
बाला-कल्पतरु	३५)
बिहार के देवी-मन्दिर	८)

श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६ फोन: ०५३२-२५०२७८३, ०९४५०२२२७६७

वर्ष ७१ (३)

'कौल-कल्पतरु' चण्डी की विशेष प्रस्तुति

श्रीललिता-सहस्र-नाम

पुष्प-३

(२५२) श्रीपरमानन्दा

से

(५००) श्रीमांस-निष्ठा

तक

✱

व्याख्याकार

'कौल-कल्पतरु' श्रीश्यामानन्द नाथ

✱

प्रार्थना एवं स्तुतिकार

'आशु-कवि' पं० हरिशास्त्री दाधीच

✱

आदि-सम्पादक

प्रातः-स्मरणीय 'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल

सम्पादक

ऋतशील शर्मा

✱

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

Email : chandi_dham@rediffmail.com

अनुदान ४५/-

पर्व-पत्र

०१. **कार्तिक कृष्णा द्वितीयाः** बुधवार, ३१ अक्टूबर, २०१२। सायं-काल अक्षय सम्पत्ति तथा दाम्पत्य सुख-प्राप्ति हेतु भगवती लक्ष्मी का भगवान् विष्णु के सहित पूजन।

०२. **श्रीराधा-जयन्ती** : कार्तिक कृष्णा अष्टमी, बुधवार, ०७ नवम्बर, २०१२। श्रीराधा-षडक्षर-मन्त्र (श्रीराधायै स्वाहा) का वर्ण-माला में 'जप'। देखें, 'रास-लीला'-अङ्क।

०३. **श्रीधनवन्तरि-जयन्ती** : कार्तिक कृष्णा, द्वादशी-त्रयोदशी, रविवार, ११ नवम्बर, २०१२। सायं घर के बाहर मृत्यु-निवारक दीप-दान। देखें, 'दीपावली की पूजा-विधि'।

०४. **नरक चतुर्दशी** (चन्द्रोदय-व्यापिनी): कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी-चतुर्दशी, सोमवार, १२ नवम्बर, २०१२। सायं-काल यमराज को दीप-दान। सायं श्रीहनुमान-जयन्ती।

०५. **महा-पर्व दीपावली** : कार्तिक भौमवती अमावास्या, मङ्गलवार, १३ नवम्बर, २०१२। श्रीगणेश-लक्ष्मी-महाकाली-महासरस्वती-कुबेर-पूजन। मध्य - रात्रि में श्रीकाली - जयन्ती। श्रीकालिका-सहस्त्र-नाम का पाठ, होम। रात्रि के अन्त में अलक्ष्मी का निःसारण।

०६. **गोवर्धन-पूजा** : कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा, बुधवार, १४ नवम्बर, २०१२। प्रातः गाय के गोबर का पर्वत बनाकर, उसमें करीषिणी लक्ष्मी की पूजा। सायं मङ्गल-दीप-मालिका।

०७. **यम-द्वितीया, भइया दूज** : कार्तिक शुक्ला द्वितीया, गुरुवार, १५ नवम्बर, २०१२। भगवान् चित्रगुप्त की पूजा।

०८. **श्रीसूर्य-षष्ठी-व्रत** : कार्तिक शुक्ला चतुर्थी-पञ्चमी-षष्ठी, शनिवार से सोमवार, १७ नवम्बर से १९ नवम्बर, २०१२।

०९. **बाबाश्री की पुण्य-तिथि** : कार्तिक शुक्ला अष्टमी, बुधवार, २१ नवम्बर, २०१२। पूज्य बाबा श्री की ६० वीं पुण्य-तिथि।

१०. **अक्षय नवमी** : कार्तिक शुक्ला नवमी, गुरुवार, २२ नवम्बर, २०१२। श्रीललिता-महा-त्रिपुर-सुन्दरी की पूजा।

११. **देवोत्थान एकादशी** : कार्तिक शुक्ला एकादशी, शनिवार, २४ नवम्बर, २०१२। भगवती लक्ष्मी-सहित भगवान् विष्णु की पूजा।

१२. **त्रिपुरोत्सव** : कार्तिक पूर्णिमा, बुधवार, २८ नवम्बर, २०१२। भगवती महा-त्रिपुर-सुन्दरी का ध्यान-पूजन। देव-दीपावली।

१३. **भैरवाष्टमी** : मार्गशीर्ष कृष्णा अष्टमी, गुरुवार, ०६ दिसम्बर, २०१२। भगवान् बटुक भैरव की पूजा।

१४. **जगद्धात्री-पूजा** : मार्गशीर्ष शुक्ला द्वितीया, शनिवार, १५ दिसम्बर, २०१२।

१५. **श्रीमहानन्दा-नवमी** : मार्गशीर्ष शुक्ला नवमी, शुक्रवार, २१ दिसम्बर, २०१२।

१६. **श्रीदत्तात्रेय-जयन्ती** : मार्गशीर्ष पूर्णिमा, गुरुवार, २७ दिसम्बर, २०१२। भगवती श्रीललिताम्बा के परमोपासक भगवान् दत्तात्रेय की जयन्ती।

सूचना : 'चण्डी' पुस्तक-माला वर्ष ७१, पुस्तक ०४
श्रीललिता-सहस्त्र-नाम (पुष्प-४) शीघ्र ही दूसरे पैकेट के द्वारा प्राप्त होगा।

महा-पर्व दीपावली के पुनीत अवसर पर :

सदुपदेश-सुधा

● परम पूज्य श्री अभिनव सच्चिदानन्द स्वामीजी महाराज

- 'दीपावली' के अवसर पर यह विचारणीय है कि शकुन्तला-दुष्यन्त के पुत्र सम्राट भरत या श्रीरामचन्द्र जी के भाई भरत या भरत मुनि अथवा जड़ भरत के नाम पर अपने देश का नाम 'भारत' चाहे पड़ा हो या न पड़ा हो, परन्तु 'भायां+रत:=भारत:' इसके अनुसार 'भारत'-शब्द का अर्थ है-'प्रकाश अर्थात् ज्ञान में आसक्त देश।'
- पूर्व-काल में अपने देश 'भारत' में हजारों विद्यापीठ, गुरु-कुल और ऋषि-कुल थे। विविध देशों से हजारों की संख्या में विद्यार्थी आकर यहाँ ज्ञान प्राप्त करते थे। मनु महाराज़ ने कहा है-

  एतद् - देश - प्रसूतस्य, सकाशादग्र - जन्मन:।
  स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्, पृथिव्यां सर्व - मानवा:।।

  अर्थात् पृथ्वी के सभी मानव भारत के गिरि-शिखिरों, कन्दराओं और नदी-तटों पर रहनेवाले महान् तपस्वी ऋषि-मुनियों के चरणों में बैठकर ज्ञान-विज्ञान प्राप्त करते थे और सर्वत्र जगत् में 'भारत' की गौरव-गाथा का विस्तार करते थे।
- ऐसे ज्ञान-प्रधान भारत की भूमि में आज अज्ञान, मोह, लोभ आदि की अतिशय वृद्धि हो रही है। इस बुरी दशा के अनेक कारण हैं। इन्हें दूर कर भारत में दिखाई देनेवाली अनेकता के स्थान पर वास्तविक दृढ़-सूत्रता लाने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। राजनैतिक दृष्टि से प्रयत्न करने से वास्तविक भावात्मक एकता स्थापित नहीं हो सकती। जैसे अनेकता तथा पाखण्ड बढने पर पूर्व में श्रीआदि शंकराचार्य जी ने आध्यात्मिक और नैतिक पृष्ठ-भूमि के ऊपर भारत में एकता स्थापित की थी, वैसे ही हमें एकात्मकता की सिद्धि के लिए प्रयत्न करना होगा।
- ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थ-परायणता आदि आसुरी दोषों के फल-स्वरूप अशान्ति, व्याकुलता, दु:ख जैसे नाना प्रकार के उपद्रव बढ़ रहे हैं। इनकी शान्ति के लिए अपने हृदय-मन्दिर में ज्ञान-ज्योति-रूपी दीपक जलाकर प्रयत्न करना ही एक-मात्र प्रभावशाली उपाय है। इसे याद दिलाने के लिए ही प्रति-वर्ष 'दीपावली' का शुभ अवसर आता है।
- भौतिक दीप-मालिकाओं से तो केवल भौतिक अन्धकार थोड़े समय के लिए दूर होता है किन्तु 'आत्म-ज्योति' से जन्म-जन्मान्तर का प्रगाढ़ अन्धकार दूर होकर 'परमानन्द-मय-प्रकाश' प्राप्त होता है।

★★★

महा-पर्व दीपावली के पुनीत अवसर पर :

अलक्ष्मी देवी का नि:सारण

● 'कौल-कल्पतरु' पण्डित देवीदत्त शुक्ल

महा-पर्व दीपावली की अमावास्या को पहले सायं-काल भगवान् गणेश के साथ भगवती लक्ष्मी की पूजा होती है। फिर रात्रि के अन्तिम पहर के अन्त में अलक्ष्मी देवी का नि:सारण किया जाता है।

'अलक्ष्मी देवी' की उत्पत्ति की कथा 'पद्म-पुराण' में इस प्रकार है-

'समुद्र-मन्थन' के बाद देवताओं ने क्षीर-समुद्र का मन्थन किया। इस बार समुद्र से 'ज्येष्ठा देवी' निकलीं। उनके गले में लाल माला थी और वे काले वस्त्र पहने थीं। उन्होंने देवताओं से पूछा- 'मुझे क्या करना है?' देवताओं ने कहा-जिस घर में सदा कलह होता हो, जिसके घर में गन्दगी हो, जो मिथ्या-वादी सदा कर्कश वचन कहता हो, जो बिना पैर धोए आचमन कर लिया करता हो, उसके यहाँ जाकर निवास करो।

'दीपावली' में अलक्ष्मी देवी का नि:सारण करने हेतु पहले ध्यान करना चाहिए। यथा-

अलक्ष्मीं कृष्ण-वर्णां, द्वि-भुजां कृष्ण-वस्त्र-परिधानाम् ।
लौहाभरण-भूषितां, शर्करा-चन्दन-चर्चिताम् ।
गृह-सम्मार्जनी-हस्तां, गर्दभारूढ़ां कलह-प्रियाम् ।।

अर्थात् अलक्ष्मी देवी कृष्ण वर्णा हैं, दो भुजाओं हैं, काले वस्त्र पहने हैं, लोहे के बने आभूषण पहने हैं, शर्करा चन्दन से लिप्त हैं, हाथ में घर की झाड़ू लिए हैं, गधे पर सवार हैं, उन्हें कलह प्रिय है।

अलक्ष्मी देवी का उक्त प्रकार से ध्यान करने के बाद उन्हें निम्न प्रकार से प्रणाम करना चाहिए-

अलक्ष्मीस्त्वं कुरूपाऽसि, कुत्सित-स्थान-वासिनी।
सुख-रात्रौ मया दत्तां, गृहाण पूजां च शाश्वतीम् ।।
दारिद्र्य-कलह-प्रिये देवि! त्वं धन-नाशिनी।
याहि शत्रोर्गृहे नित्यं, स्थिरा तत्र भविष्यसि।।
गच्छ त्वं मन्दिरं शत्रोर्गृहीत्वा चाशुभं मम।
मदाश्रयं परित्यज्य, स्थिरा तत्र भविष्यसि।।

अर्थात् हे अलक्ष्मी देवी! आप कुरूपा हैं। अपवित्र स्थान में आप निवास करती हैं। 'दीपावली' की 'सुखद रात्रि' में मेरे द्वारा की गई पूजा को ग्रहण करो। हे देवि! दरिद्रता और कलह आपको प्रिय हैं। आप धन का नाश करती हैं। आप मेरे शत्रु के घर में नित्य जाएँ। वहीं आप स्थिर होकर रहेंगी। मेरे लिए जो कुछ अशुभ है, उस सबको लेकर आप मेरे शत्रु के घर में जाएँ। मेरे आश्रय को छोड़कर आप वहीं स्थिर होकर रहेंगी।

इसके बाद ताली अथवा सूपादि बजाकर कहें-'अलक्ष्मी! दूर हो। माँ लक्ष्मी! घर में आओ!!

(२५२) श्रीपरमानन्दा

सबसे श्रेष्ठ आनन्द-स्वरूपा। जहाँ अन्यान्य तुच्छ आनन्द नित्य नहीं हैं, वहाँ **'परमानन्द'** नित्यानन्द-बोधक है।

'गीता' (६/२१) में कहा है–**'सुखमात्यन्तिक यत्तद् बुद्धि-ग्राह्यमतीन्द्रियम्'** अर्थात् यह वह आत्यन्तिक सुख या आनन्द है, जो बुद्धि के बिना इन्द्रियों द्वारा नहीं जाना जा सकता और जिसके लाभ से बढ़ कर दूसरा कोई लाभ नहीं है। गीता, ६/२२–**'यं लब्ध्वा चापरं लाभं, मन्यते नाधिकं ततः।'**

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त-जन प्रातः-काल परम उत्कृष्ट परमानन्दा-स्वरूपा आपका स्मरण करते हैं, वे शुद्ध निर्मल मतिवाले होकर आपको शीघ्र ही पाते हैं।

***

(२५३) श्रीविज्ञान-घन-रूपिणी

इस नाम से **चिदेक-रस-परत्व** का बोध होता है। अथवा **'विज्ञान'** से जीव का तात्पर्य है। इसके अनुसार **'विज्ञान'** अर्थात् जीवों के घन अर्थात् समष्टि-रूपा है। **'श्रुति'** भी कहती है–

'यो विज्ञाने तिष्ठन् विज्ञानमन्तरो यमयति' या **'एतस्माज्जीव-घनात्।'**

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त-जन आपको विशिष्ट ज्ञान के घन-स्वरूप आपको ध्याते-भजते हैं, उन्हें ब्रह्म-विद्या सुलभ हो जाती है और उनके लिए आप घन-रूपिणी अर्थात् कठिन नहीं रहती।

***

(२५४) श्रीध्यान-ध्यातृ-ध्येय-रूपा

ध्यान का अर्थ है **'ध्यै चिन्तायां'** अर्थात् चिन्ता या मानस ज्ञान। इस प्रकार **'ध्यान, ध्यातृ, ध्येय'** से ज्ञान, ज्ञातृ, ज्ञेय-रूपिणी त्रिपुटी का बोध होता है। इससे स्पष्ट होता है कि भगवती ही ध्यान करनेवाली, ध्यान और जिसका ध्यान किया जाता है, वह ध्येय भी स्वयं ही हैं। इससे **'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'** या **'ब्रह्म-व्यतिरिक्तं किञ्चिन्नास्ति'** की उक्तियों का प्रतिपादन होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! माता श्रीललिताम्बा 'ध्यान' में भी हैं और ध्यान करनेवाले 'ध्याता' में भी हैं, साथ ही 'ध्येय' अर्थात् जो ध्यान के योग्य है उसमें भी हैं। इस प्रकार वह तीनों में शोभित हैं। अतएव उनका आश्रय करो।

***

(२५५) श्रीधर्माधर्म-विवर्जिता

धर्म और अधर्म से विवर्जिता (विशेषेण विवर्जिता) अर्थात् रहिता है। तात्पर्य यह है कि ब्रह्म-रूपिणी भगवती को न पुण्य और न पाप स्पर्श कर सकते हैं। इसी को ब्राह्मी स्थिति कहते हैं। 'गीता' (४/१४) में भी कहा है–'न मां कर्माणि लिम्पन्ति।'

सुकृत है–'धर्म' और दुष्कृत है–'अधर्म'। ये दोनों भगवती को, जो द्रष्ट्री (देखनेवाली) मात्र है, स्पर्श नहीं कर सकते। रहस्यार्थ यह है कि 'धर्म' और 'अधर्म' शब्द-द्वय से व्यञ्जित 'शक्ति' और 'शिव' के भी परे भगवती पञ्चदशी-रूपा है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप धर्म की रक्षा करती हो, उसे पालती हो पर उससे बँधी नहीं हो और उसमें आसक्त भी नहीं हो। इसी प्रकार आप अधर्म को भी सर्व-प्रकार नष्ट करती हो तथा अधर्म से कभी कहीं छुई भी नहीं हो। इस प्रकार जो भक्त-जन आपको धर्म और अधर्म–दोनों से रहित मानते हुए मन-ही-मन आपको ध्याते-पूजते हैं, वे भी धर्म-अधर्म के बन्धनों में नहीं पड़ते।

***

(२५६) श्रीविश्व-रूपा

(२५७) श्रीजागरिणी

उक्त दो नाम होते हुए भी ब्रह्म-रूपिणी भगवती की एक ही जाग्रत् अवस्था के द्योतक हैं। भेद यही है कि जहाँ जीव-शक्ति–'जागरिणी' है, वहाँ समष्टि-शक्ति या ब्रह्म-शक्ति–'विश्व-रूपा' कही जाती है।

भगवती का विश्व-रूप–क्रिया-शक्ति-प्रधान है। इसी प्रकार आत्मा की जाग्रदवस्था में जीव सब क्रियाएँ करता है और सुख तथा दुःख दोनों का अनुभव करता है। इसमें भी इतना भेद है कि सूत्रात्मा 'प्राण' कारण से उपहित रहने पर भी सुख और दुःख का अनुभव नहीं करता। इस रूप में सूत्रात्मा-रूपिणी भगवती देखनेवाली मात्र रहती हैं, भोगनेवाली (भोक्त्री) नहीं। 'विश्व-रूपा जागरिणी' से भगवती की पूर्ण व्यक्तावस्था का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! तृण से ब्रह्म-पर्यन्त समूचा विश्व आप में विलास पा रहा है। आप विश्व-रूपा को नाना प्रकार की पुष्प मालाओं से सुशोभित, विभिन्न आकार-प्रकारों में चतुर भक्त नित्य पूजते हैं और क्रन्दन करते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! सदा जागरूक रहने से जीव जागर कहलाता है और निद्रा का जय करना भी जागर कहलाता है। जाग्रत-स्वप्न-सुषुप्ति–तीनों प्रकार का जागर आप में विद्यमान है। हे महा-माये! आपका 'जागरिणी' नाम सर्वत्र प्रकाश पा रहा है।

***

(२५८) श्रीस्वपन्ती

सोती हुई, किन्तु लक्ष्यार्थ है—स्वप्न देखनेवाली। इससे ब्रह्म की स्वप्नावस्था का बोध होता है, जिसे 'तैजसात्मिका' की संज्ञा सिद्ध करती है। इसमें ज्ञान-शक्ति की प्रधानता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! स्वप्न के आश्रित तैजस् पुरुष ही जीव है। स्थूल शरीराभिमानी होता हुआ स्वपन् अर्थात् सोनेवाला कहलाता है। आप उसके स्वरूप से 'स्वपन्ती' अर्थात् सोनेवाली कहलाती हो और श्रीहयग्रीव भगवान् विष्णु द्वारा पूजी जाती हो।

***

(२५९) श्रीतैजसात्मिका

उन्नत आत्माओं की भी 'स्वप्नावस्था'—तैजसात्मिका होती है। सृष्टि-क्रम के अनुसार ब्रह्म-रूपिणी भगवती की यह दूसरी 'सङ्कल्पावस्था' या 'ज्ञानावस्था' है। इस अवस्था में सृष्टि के पूर्व तैजस् रूप मात्र रहता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! सभी तैजसों की समष्टि को विद्वानों ने हिरण्य-गर्भ कहा है और यह तैजस् समष्टि भूत हिरण्य-गर्भ आपका ही रूप है। अतएव आप तैजसात्मिक नाम से सिद्ध हो रही हो।

***

(२६०) श्रीसुप्ता

'सुषुप्तावस्था' में स्थिता। इसे 'प्राज्ञात्मिका' कहते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! कारण-शरीराभिमानी जीव जब सुप्त होता है, तब आप उसके भीतर रहने के कारण, स्फूर्जित होती हुई भी सुप्ता कहलाती हो।

***

(२६१) श्रीप्राज्ञात्मिका

यह सृष्टि-क्रम के अनुसार भगवती की प्रथम 'इच्छाऽवस्था' है। इसमें इच्छा-शक्ति की प्रधानता है। व्यष्टि-भाव में इस अवस्था में केवल ईश्वर-सम्बन्धी बुद्धि रहती है। यह नित्य बोध-स्वरूपा है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! प्राज्ञ-ईश्वर कहलाते हैं। आप प्राज्ञों में आत्म-स्वरूप से रहती हो। अतः जो भक्त-जन आपको 'ॐ प्राज्ञात्मिकायै नमः' नाम से प्रातः-काल जपते हैं, वे शुद्ध बुद्धि होते हुए तत्त्व-ज्ञानी बन जाते हैं।

***

(२६२) श्रीतुर्या

(२६३) श्रीसर्वावस्था-विवर्जिता

यदि जीव की चार ही दशाएँ मानें, तो 'सर्वावस्था-विवर्जिता' विशेषण है 'तुर्या' का और यदि जीव की पाँच दशाएँ मानें, तो 'सर्वावस्था-विवर्जिता' से तुरीयातीतावस्था' का बोध होता है। श्रुति दोनों सिद्धान्तों का प्रतिपादन करती है।

'**परमहंस परिव्राजकोपनिषत्**' में कहा है कि '**ब्रह्म-प्रणव**'–षोडश–मात्रात्मक है, जो चारों अवस्थाओं के चार प्रकार के भेदों से बना है। यथा–१. विश्व-विश्व, २. विश्व-तैजस्, ३. विश्व-प्राज्ञ और ४. विश्व-तुरीय; १. तैजस् विश्व, २. तैजस् , ३. तैजस-प्राज्ञ और ४ तैजस्-तुरीय।

इसी प्रकार 'प्राज्ञ' और 'तुरीय' अवस्था-द्वय के चार-चार प्रकार के रूप हैं। इस प्रकार तुरीय-तुरीय ही 'तुरीयातीतावस्था' है। अब इसी को 'सर्वावस्था-विवर्जिता' कहें अथवा पाँचवीं एक भिन्न स्वतन्त्र अवस्था कहें, दोनों सिद्धान्त ठीक हैं। इससे वैदिक बीज प्रणव और तान्त्रिक बीजों के अर्ध-मात्रांश का बोध होता है। यह 'तुरीयातीतावस्था'–'तुर्यावस्था' के दृढ़ होने पर ही आती है–'तुर्यावष्टम्भतो लभ्यं तुर्यातीतं परं पदम्।'

वरदराज भी कहते हैं–'तुर्याभ्यास-प्रकर्षेण तुर्यातीतात्मकं पदम्।' यही अन्तरात्मा का रूप है, जो विश्व-तुल्य चिन्मात्र स्वच्छन्द आनन्द-शाली का रूप है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! तुर्य या तुरीया या चतुर्थी अवस्था-विशेष के अधीश्वर 'सदा-शिव' हैं और उनके हृदय में निवास करने से आप 'तुर्या' कहलाती हो। अतएव अन्धकार तथा तमो-गुण से परे आप तुर्या का भक्त-जन नित्य भजन करते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप सभी अवस्थाओं से रहित केवल शुद्ध संवित् स्वरूपवाली हो। जो भक्त-जन इस रूप में आपको ध्याते-भजते हैं, वे तत्त्व-ज्ञानी होकर जीवन्मुक्त होते हैं।

***

(२६४) श्रीसृष्टि-कर्त्री

सृष्टि करनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप ही विधाता की 'सिसृक्षा' अर्थात् सृष्टि रचने की इच्छा-शक्ति हो, इसीलिए देव-गण आपको सृष्टि-कर्त्री कहते हैं। आपके बिना जल-जात (कमल) से जात (पैदा हुए) ब्रह्मा में, जड़-जात होने से रचना का सामर्थ्य कहाँ से हो सकता है? वे आप ही के प्रभाव से सृष्टि रचते हैं।

***

(२६५) श्रीब्रह्म-रूपा

रजोगुण-स्वरूपा।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप जब सृष्टि करने हेतु प्रवृत्त होती हो, तब आपकी इच्छा से आपकी कला लोक-रचना के लिए ब्रह्मा का रूप धारण करती है। इस प्रकार आप स्वयं ही ब्रह्म-रूपा हो।

***

(२६६) श्रीगोप्त्री

पालन करनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! तीनों लोकों की स्थिति आप ही से है। आपके अतिरिक्त विश्व को कौन धारण कर सकता है। आप ही अपनी शक्ति से विश्व को धारण कर पालन करती हो, अतः आप 'गोप्त्री' नाम से प्रसिद्ध हो।

***

(२६७) श्रीगोविन्द-रूपिणी

सत्त्व-गुण-स्वरूपा है। गोविन्द- 'गवादिषु विदेः संज्ञायां' का अर्थ वासुदेव और वृहस्पति दोनों है। 'गोविन्दो वासुदेवे स्याद्, गवाध्यक्षे वृहस्पती' (विश्व-प्रकाश कोष)।

यहाँ वृहस्पति की परिभाषा है-'एष उवा वृहस्पतिः वाग् वै वृहती तस्या एव पतिः' अर्थात् वृहती-वाक् के स्वामी को वृहस्पति कहते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! गोविन्द, भगवान् कृष्ण, वासुदेव, गोपाल आप ही का रूप हैं। हरिवंश पुराण में महर्षि नारद ने आपकी लोक-भावना करनेवाले, व्यक्त, सर्व-मय, स्त्री-संज्ञक भगवान् के रूप में वन्दना की है।

***

(२६८) श्रीसंहारिणी

संहरण करनेवाली। अतः 'रुद्र-रूपा' कहलाती हैं। संहरण-'सम्यक्-प्रकारेण हरणः' का अर्थ है निःशेष भाव अस्तित्व का मिटना। अस्तित्व से यहाँ जीव-भाव से ही तात्पर्य है। इससे मुक्ति-दायिनी का बोध होता है। इस अर्थ की पुष्टि 'रुद्र-रूपा' नाम से होती है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! प्रलय-काल में तमो-गुण व्याप्त अपनी शक्ति से आप समूचे विश्व को अपने में समेट लेती हो। जैसे बालिकाएँ मिट्टी के खेल बनाकर, उनसे खेल चुकने के बाद अपनी इच्छा से ही उन्हें मिटा देती हैं, उसी तरह आप भी करती हो।

***

(२६९) श्रीरुद्र-रूपा

रुद्र की परिभाषा है–'रुजं द्रावयते तस्माद् रुद्रः' (शिव-रहस्य)। पुनः 'रुद् दुःखं दुःख-हेतुर्वा तद् द्रावयति यः' (वायवीय संहिता)। तात्पर्य यह है कि जो दुःखों का निर्मूलन करे। इससे पर-ब्रह्म का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप रोगों को दूर करने, भक्त-जनों को प्राण-शक्ति प्रदान करने और दुष्टों को रुलाती हुई भय को प्रदर्शित करती हो। अतः आप ही रुद्र-रूपा हो।

***

(२७०) श्रीतिरोधान-करी

(२७१) श्रीईश्वरी

तिरोधान करनेवाली **ईश्वरी** या **भगवती** अर्थात् विश्व की लुप्ति करनेवाली। '**तिरोधान**' का सामान्य अर्थ है लोप। **भास्कर राय** के मत से इसका अर्थ है–'**आच्छादनं निरवशेषो ध्वंसः**।

'**त्रिपुरा-सिद्धान्त**' में कथित **तिरस्करिणी** एक शक्ति-विशेष भी है, जिस विद्या का प्रयोग पशु-सङ्कट में किया जाता है। इससे **विश्व-भाव** या **इदन्ता-भाव** को भी लय करनेवाली महा-विद्या का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! परमाणु से लेकर पृथ्वी, पर्वत, सागर तथा आकाश-पर्यन्त समूचे प्रपञ्च को अपने में विलीन करने के कारण, आप तिरोधान-करी-स्वरूप से विदित होती हो।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप विश्व को बनाने तथा न बनाने एवं और-का-और बनाने में भी सर्वथा समर्थ हो। जो विशिष्ट विबुध विद्वान् भक्त आपके ऐसे सर्व-समर्थ-स्वरूप को ध्याते-भजते हैं, वे आश्चर्यकारी ऐश्वर्य को पाते हैं। इसमें सन्देह नहीं।

***

(२७२) श्रीसदा-शिवा

ब्रह्मा आदि पाँच ईश्वरों में सर्व-श्रेष्ठ **सदा-शिव** की अभिन्न ईश्वरी। विरल-तर शुद्ध-सत्त्व-प्रधाना ईश्वरी।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! विश्व का कल्याण करती हुई, सदा-शिव तुरीय ब्रह्म-रूप से जगत् की एक माता के रूप में उल्लसित होती हुई आप पूज्यमाना हुई हो। जो भक्त इस प्रकार आपका स्मरण करते हैं, वे श्रेयत्व को प्राप्त करते हैं।

***

(२७३) श्रीअनुग्रहदा

अनुग्रह देनेवाली। यहाँ अनुग्रह से लय-प्राप्त विश्व की सृष्टि के आदि में फिर से परमाणु आदि रूपताऽऽपत्ति का तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! विध्वंस किए विश्व को फिर से उसी स्वरूप में प्रकट करने का सामर्थ्य एक-मात्र माता श्रीललिताम्बा में है। अतएव तुम उनका आश्रय ग्रहण करो और उनके अनुग्रहदा-स्वरूप से अनुग्रह को प्राप्त कर अपनी बिगड़ी को भी बना लो।

***

(२७४) श्रीपञ्च-कृत्य-परायणा

पाँच प्रकार के कर्मों की करनेवाली। शक्ति-सूत्र है–'तथा तद्-वत् पञ्च-विध-कृत्यानि करोति।' ये पञ्च-कृत्य हैं–'आभासन-रक्ति-विमर्शन-वीजावस्थापन-विलापन-तस्तानि।'

आगमान्तर के अनुसार ये हैं–१. सृष्टि, २. स्थिति, ३. संहृति, ४. तिरोभाव और ५. अनुग्रह।

◆◆स्तुति◆◆

हे प्रपञ्च का सम्यक् रूप से पालन करनेवाली माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त पाँच कृत्यों में परायण आपको प्रत्येक पर्व में पाँचों तत्त्वों से पूजते हैं, वे पाँचों तत्त्वों पर अधिकार करने में समर्थ हो जाते हैं।

***

(२७५) श्रीभानु-मण्डल-मध्यस्था

सूर्य-मण्डल के मध्य में रहनेवाली। इससे तात्पर्य है श्रुति में कथित ब्रह्म-पुरुष से, जो 'हिरण्मय पुरुष', 'अन्तरादित्य' अर्थात् भीतर के सूर्य में है–'य एषोऽन्तरादित्ये हिरण्मयः दृश्यते।'

'भानु-मण्डल' से हृदय-मण्डल में जो अनाहत-चक्र है, उसका भी तात्पर्य है। इस प्रकार आत्मा में रहनेवाली अन्तरात्मा से भी तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त सूर्य-मण्डल के बीच विराजमान अथवा अनाहत-चक्र के मध्य आपका ध्यान करते हैं, वे अपने अभीष्ट को प्राप्त करते हुए दिव्य दृष्टिवाले हो जाते हैं।

***

(२७६) श्रीभैरवी

भैरव की स्त्री या शक्ति। भैरव की तन्त्रोक्त परिभाषा है–भीति अर्थात् अविद्या से रक्षण कर मोक्ष देनेवाला। देखें 'महा-भैरव-पूजिता' की व्याख्या।

अथवा 'भीरूणां स्त्रीणां संहतिर्भैरवी' अर्थात् स्त्री-समूह। इससे शक्ति-पुञ्ज का तात्पर्य है। इसका प्रयोग विभूति या ऐश्वर्य के सम्बन्ध में भी है। त्रिपुराम्बा चक्रेश्वरी के मन्त्र के मध्यम कूट में रेफ के निष्कासन से जो मन्त्र बनता है, वही भैरवी का मान्त्रिक शरीर है।

बारह वर्ष की कुमारी को भी 'भैरवी' कहते हैं। यही बाला है, जो सुन्दरी भगवती का एक प्रधान रूप है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त पर-शिव महा-भैरव के हृदय में विराजमान भैरवी के रूप में आपका स्मरण करते हैं, वे सिद्ध सारस्वत तत्त्व-ज्ञानी हो जाते हैं।

***

(२७७) श्रीभग-मालिनी

'भग' अर्थात् ऐश्वर्य की 'मालिनी' अर्थात् धारण करनेवाली। 'भग' से षड्-गुण्य अर्थात् छः गुणों का बोध होता है। 'भग-मालिनी'–पराम्बा का एक विशिष्ट रूप है, जिसकी वासना 'भावनोपनिषत्' से जानी जा सकती है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपके भग-मालिनी नाम-मन्त्र को जपते हैं, वे भग-शब्द-वाच्य छहों ऐश्वर्य को प्राप्त करते हैं। उन्हें धर्म और यश दोनों की प्राप्ति होती है।

***

(२७८) श्रीपद्मासना

पद्म या कमल पर बैठनेवाली। 'पद्म एव आसनं यस्याः सा' अर्थात् पद्म ही जिसका आसन हो अर्थात् भगवती लक्ष्मी। अथवा 'पद्मां लक्ष्मीं सनति, भक्तेभ्यो विभज्य ददाति या सा' अर्थात् भक्तों को धन का वितरण करनेवाली अर्थात् भगवती लक्ष्मी। अथवा 'पद्मः शूरः पद्मासुरस्तमस्यति क्षिपतीति पद्मासना' अर्थात् पद्मासुर को भगानेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सदैव पद्म पर विराजमान, ब्रह्म-शक्ति-स्वरूपिणी माता श्रीललिताम्बा का ध्यान करो और सभी देवों द्वारा वन्दित उन पद्मासना की कृपा से विपुल लक्ष्मी को प्राप्त करो।

***

(२७९) श्रीभगवती

छः प्रकार के ऐश्वर्यवाली। 'देवी-भागवत' के अनुसार 'भगवती' उसे कहते हैं, जो विश्व की १. उत्पत्ति, २. प्रलय, ३. गति, ४. आगति, ५. विद्या और ६. अविद्या-तत्त्व को जाने–

'उत्पत्तिं प्रलयं चैव भूतानां गतिमागतिम्। अविद्या-विद्ययोस्तत्त्व-वेत्तीति भगवत्यसौ।'

'शक्ति-रहस्य' कहता है कि सुर-गण जिसकी पूजा या भजन करते हैं, वही 'भगवती' है क्योंकि सेवा के अर्थ में 'भज्' - धातु का प्रयोग है; जिससे 'भगवती'-शब्द बना है- भज+ग+मतुप्+ङीप्।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! भगवती श्रीललिताम्बा को ध्याओ और 'भग'-नामक छहों ज्ञप्तियों- १. जन्म, २. मरण, ३. आगम, ४. निर्गम, ५. ज्ञान तथा ६. अज्ञान को सम्यक् प्रकार से जान लो।

***

(२८०) श्रीपद्म-नाभ-सहोदरी

विष्णु की बहन। 'सहोदरा' का अर्थ है, एक माँ के पेट से जन्म लेनेवाली, परन्तु इस नाम का रहस्यार्थ है-ब्रह्म-बीजांकुर से निकले 'धर्म' और 'धर्मी' अर्थात् 'शिव' और 'शक्ति' या 'शक्तिमान्' और 'शक्ति'। यह नाम उपहित चेतना अर्थात् पर-बिन्दु से निकली मूला-'प्रकृति' और 'शिव' अर्थात् 'रक्त-बिन्दु' और 'शुक्ल-बिन्दु' का द्योतक है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको पद्म-नाभ विष्णु की सहोदरी भगिनी के रूप में आपको ध्याते हैं-पूजते हैं, वे भव की सभी प्रकार की विभीषिकाओं से पार हो जाते हैं।

***

(२८१) श्रीउन्मेष-निमेषोत्पन्न-विपन्न-भुवनावली

पलक उठते उत्पन्न होनेवाले और पलक गिरते नष्ट होनेवाले भुवनों अर्थात् ब्रह्माण्डों के समूहवाली। इससे एक तो भगवती का लीला-मयी होना और दूसरे अमिताकार अर्थात् देश-काल के परिच्छेद से रहिता होना सिद्ध होता है। इसी भाव के समर्थक आगे के भी तीन नाम हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सभी वाञ्छितों को सिद्ध करनेवाली उन माता श्रीललिताम्बा का आश्रय ग्रहण करो, जिनके नेत्रों के पलक खुलने से जगत् प्रगट होता है और जिनके नेत्रों के पलक बन्द होते ही जगत् विनष्ट हो जाता है।

***

(२८२) श्रीसहस्त्र-शीर्ष-वदना

हजार सिरवाली। 'सहस्त्र' से अनन्त या असंख्य का तात्पर्य है। वेद में यही संज्ञा परब्रह्म-रूपी विष्णु की है-'सहस्त्र-शीर्षा पुरुषः।' 'देवी-भागवत', तृतीय स्कन्ध में लिखा है-

'सहस्त्र-नयनाऽऽरामा, सहस्त्र-कर-संयुता। सहस्त्र-शीर्ष-चरणा, भाति दूरादसंशयम्।'

'गीता' में भी विराट्-रूप की एक ऐसी ही लक्षणा है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि तुम अपने द्रोहियों, विराधियों, शत्रुओं का कदन, दमन, पराभव, विनाश चाहते हो, तो सहस्त्रों काम-देवों से भी अधिकाधिक सुन्दर तथा पद्म पर विराजमान हजारों सिर और मुखवाली अर्थात् हजारों मुख, बाहु, पद, हस्तवाली जगदम्बा भगवती श्रीललिताम्बा का भजन व पूजन करो।

***

(२८३) श्रीसहस्त्राक्षी

हजार नेत्रोंवाली। इससे भगवती की सर्व-व्यापकता का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अपने दुरितों-पापों के घात के लिए, उन भगवती श्रीललिताम्बा के चरणों में प्रणाम करो, जो अपने भक्तों को देखने के लिए हजारों नेत्र धारण करती हैं।

***

(२८४) श्रीसहस्त्र-पात्

'पात्' किरण को भी कहते हैं, जिससे सूर्य का भी एक नाम है-'सहस्त्र-पात्'। साथ ही पाद (पैर) को भी 'पात्' कहते हैं। यहाँ 'किरण' अर्थ ही उचित है। इससे परम ज्योति-रूपिणी भगवती की असंख्य किरणें या मयूखाएँ हैं, ऐसा बोध होता है।

इन पदों से भुवनेश्वरी के वीज-द्वय का भी उद्धार होता है। 'सहस्त्राक्षी' से ल-कार का और 'सहस्त्र'-शब्द से ह-कार तथा स-कार का। इनसे दूसरे व तीसरे कूट-द्वय का उद्धार होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जो अपाद बिना पैरवाली है, जो द्वि-पाद अर्थात् दो पैरवाली है और जो सहस्त्र-पाद अर्थात् हजार पैरवाली भी है, उसका सदैव गुण-गान करो, जिससे वह तुम्हारे लिए सदैव प्रकाशित होती रहे।

***

(२८५) श्रीआब्रह्म-कीट-जननी

ब्रह्मा से लेकर कीट-पर्यन्त अखिल जीवों की माता। इससे भगवती के 'आदि'-मातृत्व' का और उसके 'अजा-पदत्व' का बोध होता है अर्थात् वह अनादि है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! शीघ्र-से-शीघ्र तत्त्वज्ञ होने के लिए, सभी दुःखों का शमन करनेवाली एवं सभी दुर्जनों का दमन करनेवाली, ब्रह्म से कीट तक को पैदा करनेवाली, अपनी निज जननी माता श्रीललिता की पूजा करो और हर्ष के साथ उनकी स्तुति करो।

***

(२८६) श्रीवर्णाश्रम-विधायिनी

वर्णाश्रम-धर्म की रचनेवाली। यह धर्म अनेक प्रकार का है। एक तो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र–इन चार वर्णों का निर्धारण। दूसरा ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और संन्यास–इन चारों आश्रमों का निर्देशन। साथ ही कर्म-योग, भक्ति-योग, ध्यान-योग और ज्ञान-योग–इन चारों योगों के आधार पर 'साधनाश्रम' का विभाजन। भगवती ने स्वयं कहा है–

ध्यानेन कर्म-योगेन, भक्त्या ज्ञानेन चैव हि।
प्राप्याऽहं ते गिरि-श्रेष्ठ!, नान्यथा कर्म-कोटिभिः।।

◆◆प्रार्थना◆◆

जो माता के समान सभी लोकों की, सभी वर्णों की और सभी आश्रमों की विधान करनेवाली हैं। जो माता श्रीललिताम्बा अपने पुत्रों की व्यवस्था करने के लिए कार्यानुसार वर्ग बनाती हैं, वे हमारे लिए सदा सुख-दायिनी होवें।

***

(२८७) श्रीनिजाज्ञा-रूप-निगमा

'निगम' के अनेक तात्पर्य हैं। 'नि+गम्+अच्' का वाच्यार्थ है–मार्ग। इसी भाव के आधार पर वेदों को 'निगम' कहते हैं अर्थात् वेद-विहित ही उचित मार्ग है, जिस पर वेदाधिकारियों को चलना चाहिए अर्थात् वेदानुसार कर्म करना चाहिए।

अथवा तन्त्र-शास्त्र के एक अंश को भी निगम कहते हैं। यह वह अंश है, जिसे पार्वती या भैरवी ने शिव या भैरव से कहा है। इससे कर्म-काण्डात्मक वेदों का बोध होता है। भास्कर राय कहते हैं–

'साध्य-साधनेति कर्तव्यता रूपांश-त्रय-विशिष्टामर्थ-भावनार्थ-वादादिभिः कुर्वन्ति, तादृशा निगमाः कर्म-काण्डात्मका वेदाः।'

वेद से पञ्चम वेद–'तन्त्र-शास्त्र' का भी बोध होता है। महर्षि जैमिनि के सूत्र 'तद्-भूतानां क्रियार्थेन समाम्नायः' से भी यही तात्पर्य स्पष्ट होता है। 'आम्नाय'–वेद और तन्त्र दोनों को कहते हैं। इसी प्रकार 'निगम' भी वेद और तन्त्र दोनों को कहते हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! भव अर्थात् संसार में परम उत्कर्ष प्राप्त करने के लिए, वेद जिनकी आज्ञा हैं, उन भुक्ति-मुक्ति-प्रदा परमात्मा-रूपिणी महा-शक्ति माता श्रीललिताम्बा को भाव-पूर्ण होकर अपने में भावित करो।

***

(२८८) श्रीपुण्यापुण्य-फल-प्रदा

पुण्य और अपुण्य अर्थात् पाप–दोनों कर्मों का फल देनेवाली। इससे 'फल-दात्री' अर्थात् सुकृत और दुष्कृत–दोनों कर्मों की अधिष्ठात्री ईश्वरी का बोध होता है। ब्रह्म-मीमांसाधिकरण-सूत्र–'फलमत उपपत्तेः' से भी ऐसा ही बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! विद्वानों में शिरोमणि होने के लिए, पुण्य और पापों के फल को देनेवाली त्रिपुर-सुन्दरी माता श्रीललिताम्बा को भक्ति-भाव से ध्याओ-पूजो।

***

(२८९) श्रीश्रुति-सीमन्त-सिन्दूरी-कृत-पादाब्ज-धूलिका

श्रुति के ऊर्ध्व-भाग **उपनिषदों** में सिन्दूर-जैसा अन्तर्गत रहस्यार्थ ही जिसके चरण-कमलों की धूलि है। यहाँ '**श्रुति**', जो स्त्री-लिङ्गात्मक शब्द है, स्त्री मानी गई है। इस स्त्री की माँग का सिन्दूर ही **भगवती की चरण-धूलि** है। इस पद से यह बोध होता है कि श्रुतियों के श्रेष्ठ अंश भी इस **भगवती** के पूर्ण रूप को स्पष्ट करने में असमर्थ हैं। '**धूलि**'-पद से अत्यल्प-तम का तात्पर्य है। बात भी सही है क्योंकि **वेद** स्वयं '**नेति नेति**' कहते हैं। अन्यत्र भी कहा है–'**वेदा ब्रुवन्त्यपि नहीति विमुग्ध-बुद्ध्या**' अर्थात् विमुग्ध भाव से **वेद** भी 'नहीं-नहीं' मात्र कहते हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

वेदों के सीमन्त रूप उपनिषदों में सिन्दूर-वत् पदवाली भगवती श्रीललिताम्बा मेरे मानस कमल में परिपूर्ण विलास करें।

***

(२९०) श्रीसकलागम-सन्दोह-शुक्ति-सम्पुट-मौक्तिका

सब **वेदों** या **तन्त्रों** के समूह-रूपी '**शुक्ति**' अर्थात् सीपियों के गर्भस्थ मोती के आभूषणवाली। '**मौक्तिक**'-शब्द का शब्दार्थ है–मोती का आभूषण (नाक का, जिसे बुलाकी कहते हैं)। आभूषण का रहस्यार्थ '**धर्म**' है। इससे यह बोध होता है कि **वेद** या **तन्त्र–भगवती के पूर्ण स्वरूप** को स्पष्ट करने में सर्वथा असमर्थ होते हुए **भगवती के धर्मों** का ही प्रतिपादन करते हैं। '**यतो वाचा निवर्तन्ते**' का भी यही तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

सभी वेदों के समूह-रूप सीपियों के सम्पुट के मध्य-भाग में विराजित मौक्तिक-रूपवाली परमेश्वरी माता श्रीललिताम्बा, मेरा मनोरथ पूर्ण करें।

***

(२९१) श्रीपुरुषार्थ-प्रदा

पुरुषार्थ देनेवाली। **पुरुषार्थ** चार प्रकार के हैं–**१. धर्म, २. अर्थ, ३. काम** और **४. मोक्ष**। अथवा '**पुरुष**' से **रुद्र** का तात्पर्य है–'**पुरुषो वै रुद्रः**' (श्रुति)। इस प्रकार **रुद्र** का अर्थ अर्थात् '**ब्रह्मार्थ**' या '**ब्रह्म-विद्या**' की देनेवाली है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! बल, विक्रम, धन, भोग, सुख, [illegible], ऐश्वर्य और धर्मादि के लिए, चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति के लिए भक्त आपको भजते हैं, ध्याते हैं तथा आपके गुण गाते हैं। आपके द्वारा पुरुष अर्थात् रुद्र, शिव या विष्णु पुरुषार्थ-दाता बनते हैं। आप ही पुरुषार्थ-प्रदा शक्ति हो।

***

(२९२) श्रीपूर्णा

पूर्ण-ब्रह्म या **पर-ब्रह्म** इससे देश-काल के परिच्छेद से रहिता **पूर्ण सत्ता** का बोध होता है। अथवा इससे '**पञ्चदशी विद्या**' का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप सभी कामनाओं को पूर्ण करनेवाली, विश्व के गुणों से पूर्ण हो। अत: देव, असुर, गन्धर्व, यक्ष तथा सिद्ध-मुनि-गण सभी आपके चरण-युगलों को पुष्पादि उपचारों से पूजते हैं।

***

(२९३) श्रीभोगिनी

भोगनेवाली, भोक्त्री। **भगवती**–विशुद्ध चेतना-स्वरूपा, केवल देखनेवाली '**द्रष्टी**' ही नहीं है, अपितु **भोगनेवाली जीवात्मा**-स्वरूपिणी भी है। इससे **भगवती** का **अखिल विश्व-रूपत्व** सिद्ध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! स्व-संवेद्य सुख का अनुभव ही 'भोग' कहलाता है और वह आपके पास है। जो भक्त भोगवान् होने के कारण आपको भोगिनी समझ कर भजते हैं, वे भोग भोगते हुए भी मुक्त होते हैं। भोग उन्हें बन्धन में नहीं डालते।

***

(२९४) श्रीभुवनेश्वरी

चौदहों भुवनों की ईश्वरी। अथवा '**भुवन**' जल को भी कहते हैं। इससे **जल-तत्त्व की ईश्वरी** का बोध होता है। अथवा **हल्लेखात्मक मन्त्र-स्वरूपा** है। अथवा **श्री-चक्र** के एक **मानवौघ-गुरु भुवनानन्दनाथ** की उपासिता विद्या से तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! चौदह भुवन नामक लोकों का पालन करनेवाली माता भुवनेश्वरी श्रीललिताम्बा का चिन्तन करो और सर्वत्र विजयी होते हुए अधिक-से-अधिक उत्कर्ष को प्राप्त करो।

***

(२९५) श्रीअम्बिका

माता अर्थात् समष्टि-माता। इससे **विश्व की माता** का बोध होता है। '**अम्बा**' रात्रि को भी कहते हैं–'**रात्रि-रूपा, महा-देवी, दिवा-रूपो महेश्वरः।**' रात्रि से तात्पर्य है–**ब्रह्म की विश्रान्तावस्था** से। पुनः '**निद्रा**' को भी **अम्बा** कहते हैं (विश्व-कोष)। '**सप्तशती**' में उल्लिखित **भगवती निद्रा** आप ही हैं (देखें **रात्रि-सूक्त**)।

◆◆प्रार्थना◆◆

इच्छा, ज्ञान और क्रिया–इन तीनों की जो समष्टि कहलाती हैं, जो निद्रा-स्वरूपा रात्रि हैं, जो सम्पूर्ण जगत् की माता-रूपिणी भवानी हैं, जो पीड़ितों के कल्याण के लिए तत्पर हैं, वे त्रि-लोक-जननी माता श्रीललिताम्बिका, मुझे सभी विघ्नों से बचावें।

***

(२९६) श्रीअनादि-निधना

जन्म और मरण से रहिता अर्थात् जिसका न जन्म हुआ है और न निधन अर्थात् मरण ही होगा। इससे अनादि और अनन्ता अर्थात् नित्या भगवती का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जिसका आदि-जन्म, निधन-मरण नहीं होता, जिसकी पूजा धन के आगम का निदान अर्थात् मूल-कारण है और जो सदा से कमल के आसन पर विराजमान है, उन कामेश्वरी माता श्रीललिता का पूजन-भजन-यजन करो तथा सहज रूप से अमरत्व की प्राप्ति की ओर अग्रसर हो।

***

(२९७) श्रीहरि-ब्रह्मेन्द्र-सेविता

विष्णु, ब्रह्मा और इन्द्र से सेविता। इससे श्री-चक्र के १८ वें और १७ वें प्राकारों के मध्य में विष्णु की, १७ वें और १६ वें प्राकारों के मध्य में ब्रह्मा की तथा १५ वें और १४ वें प्राकारों के मध्य में इन्द्रादि दश दिक्-पालों की स्थिति का तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जिसकी सेवा विष्णु, ब्रह्मा तथा इन्द्र भी करते हैं, ऐसी सर्वोत्कृष्ट गुणवती माता श्रीललिताम्बा का आश्रय ग्रहण करो।

***

(२९८) श्रीनारायणी

'नरस्यापत्यम्' अर्थात् नर से हुए को 'नार' कहते हैं। इससे 'शिव' और 'विष्णु' दोनों का बोध होता है। 'मनु-स्मृति' में इसकी परिभाषा दी है–

आपो नारा इति प्रोक्ता, आपो वै नर-सूनवः।
अयनं तस्य ता यस्मात्, तेन नारायणः स्मृतः।।

अर्थात् जल का नाम 'नारा' कहा गया है क्योंकि नर से उसकी उत्पत्ति हुई। अतः जल जिसका स्थान है, इस व्युत्पत्ति से नारायण कहे गए हैं।

अथवा न धातु सर्ग (सृष्टि) के अर्थ में है–'न नये।' इससे 'नर' बना। नर को ही 'नार' कहते हैं। उसका स्थान होने से 'नारायण' है–

नर एव नारस्तेषामयनं स्थानं नारायणः।

अथवा–

नरस्य मनुष्यस्यायं नारस्तस्यायनं मार्गः इति नारायणः।

अयनं वर्त्म-मार्गाध्व-पन्थानः पदवी सृतिः' (इत्यमरः)।

'नार'-शब्द के और भी अर्थ हैं। एक अर्थ है–विज्ञान, जिसके अनुसार 'नारद' का अर्थ है विशेष ज्ञान देनेवाला।

यहाँ 'देवी-भागवत' की परिभाषा–'नयतीति नरः प्रोक्तः, परमात्मा सनातनः' ही उपयुक्त है। अतः 'नारायणी' से परमात्मा का ही बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको नारायणी समझ कर भक्ति से भजते हैं, वे ही अद्वैत ज्ञान से संयुत होते हैं। उन्हें ही प्रकृति-पुरुष का अद्वय बोध होता है।

***

(२९९) श्रीनाद-रूपा

नाद ही जिसका रूप हो। 'नाद' का अर्थ है–शब्द। यह दो प्रकार का होता है–१. आहत, २. अनाहत। 'आहत' उसे कहते हैं, जो दो के टक्कर लगने से हो और 'अनाहत' उसे कहते हैं, जो स्वतः हो। 'आहत'–अनित्य है और 'अनाहत'–नित्य। अतः 'नाद' से अनाहत शब्द का ही बोध होता है। इसका तत्त्व सादाख्य है। यह शब्द-ब्रह्म-बोधक है। (विशेष ज्ञान के लिए 'नाद-विन्दूपनिषत्' देखें)।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त-जन अपने नाभि-कमल में अव्यक्त मूल नाद के रूप में आपका निरूपण कर, आपका साक्षात्कार करते हैं, वे सिद्ध वाणीवाले होकर इस संसार में पुनः नहीं आते, उन्हें आत्म-रूप प्राप्त हो जाता है। अथवा किसी भी 'प्रणव' (१. ॐ, २. ह्रीं, ३. क्लीं, ४. क्रीं, ५. ऐं) में आपको 'नाद'-स्वरूप समझकर, जो अपने भृकुटी के मध्य केन्द्र में आपको ध्याते हैं–भजते हैं, वे उस चिदानन्द-मयी अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

***

(३००) श्रीनाम-रूप-विवर्जिता

जिसके नाम और रूप नहीं हैं। इससे चिद्-ब्रह्म-रूपिणी का बोध होता है क्योंकि ब्रह्म के– १. अविद्या, २. विद्या, ३. आनन्द और ४. तुरीय–इन चार पादों में से अविद्या-पाद अर्थात् नाम और रूप के अंश से यह वस्तुतः वर्जित है। तात्पर्य यह है कि इसका न कोई विशेष नाम है और न कोई विशिष्ट रूप है अर्थात् सभी नाम और सभी रूप इसी के हैं–'सर्वं खल्विदं ब्रह्म।'

◆◆स्तुति◆◆

हे कल्याण-कारिणी माता श्रीललिताम्बा! आप नाम और रूप से रहित, केवल शुद्ध संवित् रूप हो। आपके निष्कल ब्रह्म होने से भी जगत् के पाँच रूप होते हैं–१. अस्ति, २. भाति, ३. प्रिय, ४. नाम और ५. रूप। इनमें नाम और रूप से पूर्णतया रहित होने पर भी भक्त-जन आपके ऐश्वर्य तथा गुणों का वर्णन विविध नामों, विविध रूपों में करते हैं। यह आपके सम्बन्ध में अत्यन्त ही विचित्र बात है।

***

(३०१) श्रीह्री-ङ्कारी

लज्जा करनेवाली। लज्जा करती है, अत: अपने को छिपाती है अर्थात् आवरणों से आवृता है। इसके यथार्थ को 'स्वतन्त्र-तन्त्र' ने 'व्याकुलाक्षर-श्लोक' में ही स्पष्ट किया है। 'व्याकुलाक्षर-श्लोक' का उद्देश्य ही छिपाना है अर्थात् लज्जा से व्यक्त न करना है। उक्त श्लोक है–

त्वं कामाम्नान प्रशव्यो नानमसग्नि मात्वग्र रोमईयोकार्विर्श तनन्त फादुल नान्निविम्।

इसका वास्तविक स्वरूप यह है–

व्योम्ना प्रकाश-मानत्वं, ग्रसमानत्वमग्निना।
तयोर्विमर्श ईकारो, विन्दुनान्तर्न्निफालनम्।।

अर्थात् 'व्योम' या ह-कार से प्रकाश, 'अग्नि' या र-कार से ग्रसन और दोनों का विमर्श-सूचक ई-कार है तथा विन्दु से निष्फालन का तात्पर्य है। संक्षेप में इस संज्ञा से सृष्टि, स्थिति और संहृति-कारिणी का बोध होता है। इससे इस बीज 'ह्रीं' को 'तान्त्रिक प्रणव' कहते हैं। यह भुवनेश्वरी-वीज-स्वरूपा है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! ह+र+ई–इन तीनों से जगत् का जन्म, स्थिति और संहार करती हुई आप 'ह्री-ङ्कारी'-नाम से प्रख्यात हो। जो भक्त इस प्रकार की विशेष भावना के साथ आपका स्मरण, चिन्तन, गुण-गान करते हैं, वे जन्म-रहित होने की स्थिति को जीत लेते हैं।

***

(३०२) श्रीह्री-मती

लज्जा-मती। 'श्रुति' भी कहती है–'लज्जामती तुष्टिरिष्टा।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! पर-शिव के सम्मुख आपकी 'ह्री-मती'-रूपी लाज-भरी दृष्टि सदा मेरे ऐश्वर्य की वृद्धि के लिए हो, ऐसी आप से विनती है।

***

(३०३) श्रीहृद्या

'हृदि भवा' अर्थात् हृदय में होनेवाली, चुभनेवाली अर्थात् रमणीया या सुन्दरी। भगवती त्रिपुर-सुन्दरी–'हृद्या' अर्थात् रमणीय होने से हृदय में निवास करनेवाली न हों, तो कौन हो ?

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! भक्तों के हृदय में नित्य निवास करने से, जो भक्त-जन आपको 'हृद्या' जानकर शुक्ल पुष्प-अक्षतादि से पूजते हैं, वे विद्वानों की सभा में हृद्य अर्थात् मनोहर मधुर रचनाएँ सुनाते हैं और सर्वत्र उनकी प्रशंसा होती है।

***

(३०४) श्रीहेयोपादेय-वर्जिता

हेय और उपादेय अर्थात् 'हातुम्' छोड़ने योग्य और 'उपादातुम्' लेने योग्य इन दोनों भावों से रहिता। इससे बोध होता है कि भगवती प्रवृत्ति और निवृत्ति-बोधक दोनों शास्त्रों के प्रतिपादन से परे हैं अर्थात् अलक्षणा भगवती अनिर्वाच्या हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! अत्यन्त सौभाग्य से पूर्ण पुण्यवाले किसी भक्त के हृदय में आपकी 'हेय' अर्थात् त्याज्य और 'उपादेय' अर्थात् ग्राह्य–भाव तथा वस्तु-विवेक से रहित परा-भक्ति उदित होती है।

***

(३०५) श्रीराज-राजार्चिता

राजाओं के राजा की पूजिता। राजाओं के राजा से मनु अर्थात् सम्पूर्ण पृथ्वी के राजा से तात्पर्य है।

अथवा 'राज' का अर्थ जब धन-सम्पत्ति का स्वामी है, तब इससे कुबेर का आशय है। इस प्रकार इससे मनु और कुबेरोपासिता विद्या का बोध होता है। कुबेर की स्थिति 'श्री-चक्र' के १४वें और १५ वें प्राकारों के मध्य में है। मणि-भद्र आदि यक्षों अर्थात् धन-पतियों का भी 'राज-राजा' से बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जब आप पञ्च-ब्रह्म-मय महा-सिंहासन पर आरुढ़ होने के लिए धीरे-धीरे चलती हो, तब सभा-मण्डप के मध्य मार्ग में ही राज-राज श्री कुबेर आपको पूजने लगते हैं एवं अञ्जलि बाँधे ऊँचे स्वर में जय-जयकार करते हुए इन्द्र आप पर बार-बार फूलों की वर्षा करते हैं।

***

(३०६) श्रीराज्ञी

देखिए द्वितीय नाम की व्याख्या। राज-राजेश्वरी की पट्ट-महिषी को 'राज्ञी' कहते हैं। राज-राजेश्वरी से यहाँ 'कामेश्वरी-त्रिपुरेश्वरी' का तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! त्रि-भुवन की एक महा-महारानी, जिसकी आज्ञा के सभी देव वशवर्ती हैं, उन माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-पूजो और अत्यन्त कुशल पुण्य-शाली बनो।

***

(३०७) श्रीरम्या

सौन्दर्य-वती। 'रम्या'–सुन्दरी-वाचक संज्ञा है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! इस लोक में अधिकाधिक पुण्य-फल के भागी वे ही भक्त हैं, जिन्होंने एक बार भी सभी देवों के द्वारा पूजित नितान्त रम्या रमणीय आपके चरण-कमलों की अरुण प्रभा देखी है।

***

(३०८) श्रीराजीव-लोचना

सुन्दर नयनवाली। 'विश्व-कोष' के अनुसार 'राजीव'–हरिण, मछली और कमल को कहते हैं–'राजीवाख्या मृग-मत्स्ये, पद्मे राजोपजीविनी।'

अथवा 'राजोपजीविनो लोचयति पश्यति इति राजीव-लोचना' अर्थात् राजा के उप-जीवियों को देखनेवाली, समस्त विश्व के राजा ब्रह्म-रूपी कामेश्वर के उप-जीवी 'उप समीपे जीवति तिष्ठति' अर्थात् समीप में रहनेवाले, भक्तों को देखनेवाली, रक्षा करनेवाली। 'राजा' का अर्थ है (मेदिनी कोष)–'राजा प्रभौ च नृपतौ, क्षत्रिये रजनी-पतौ'।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! कुछ लोग माता श्रीललिताम्बा को मृगाक्षी अर्थात् हरिण की आँख-जैसी आँखवाली समझते हैं, कुछ लोग मीन अर्थात् मछली के समान आँखवाली कहते हैं किन्तु तुम उनको राजीव-लोचना अर्थात् कमल-जैसी आँखवाली समझ कर उनका भजन करो और कमल-जैसी अत्यन्त मनोहर वृत्तिवाले बनो।

***

(३०९) श्रीरञ्जिनी

रञ्जन अर्थात् आनन्द करनेवाली। तात्पर्य यह है कि यह अपने भक्तों अर्थात् पहचाननेवाले उपासकों को आनन्दित करनेवाली है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! भक्तों के मन के अभीष्ट को पूर्ण करने और अपनी अरुण-प्रभा से द्यावा-भूमि को सदैव रञ्जित करने के कारण, सभी वशिनी आदि देवियाँ आपको रञ्जिनी कहती हैं।

***

(३१०) श्रीरमणी

रमण करनेवाली। यह सब जीवों में रमण करती है। यह ब्रह्म की एक विशिष्ट लक्षणा है। इसी आधार पर 'राम' से पर-ब्रह्म का तात्पर्य है–'रमणात् रामः'अथवा 'रमन्ते योगिनो यस्मिन् चासौ रामः' अर्थात् योगी-जन जिसमें रमण करते हैं, वही राम है। राम-शब्द पुल्लिङ्ग है और रामा की अर्थ-वाचक 'रमणी' स्त्री-लिङ्ग है। तात्पर्य दोनों का एक ही है।

◆◆स्तुति◆◆

हे महा-महेश्वरि माता श्रीललिताम्बा! कामेश्वर पर-शिव के साथ आप रमण करती हो और भक्तों के मानस, हृदय में अनेक दिव्य भावों से क्रीड़ा करती हो, इस कारण ब्रह्मादि देव सभी कानों को रमणीय प्रतीत होनेवाली आपकी इस रमणीय आख्या को रमणी कहते हैं।

***

(३११) श्रीरस्या

चखने (आस्वादन करने) योग्य। यह तो स्वयं रस है–'रसो वै सः' ('श्रुति', 'तैत्तिरीय', ब्रह्मानन्द-वल्ली अनुवाक्)।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप रस-स्वरूपा हो। अतः योग-प्रेमी भक्त-जन आन्तर-ध्यान में आपको नित्य अनुभव से रसित कर रसास्वाद लेते हैं।

***

(३१२) श्रीरणत्-किङ्किणि-मेखला

बोलती हुई छोटी-छोटी घण्टियों की मेखला या करधनी के आभूषणवाली। इसकी व्याख्या ३८ वें नाम की व्याख्या में देखें।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! बाल-सूर्य के समान कान्तिवाली और अपने लाल-लाल प्रभा-जाल से द्यावा-भूमि को रँगनेवाली तथा अव्यक्त मधुर बजती हुई घुँघरूवाली करधनी पहने हुए माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ, भजो और मनुष्यों को क्या देवों को भी अपने वश में कर लो।

***

(३१३) श्रीरमा

लक्ष्मी। रमण करना लक्ष्मी की एक लक्षणा है, जिससे लक्ष्मी को चञ्चला कहते हैं। 'रमा' से वाग्-देवता सरस्वती का भी बोध होता है। लक्ष्मी का भी एक तात्पर्य सरस्वती अर्थात् विज्ञान-शक्ति से है–'लक्षयति इति लक्ष्मीः'।

'सूत-संहिता' भी ऐसा कहती है–'लक्ष्मीर्वागादि-रूपेण, नर्तकीव विभाति या।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप अपनी रमणीय कान्ति से भगवान् मुकुन्द को मोहित करती हुई, अपने दृष्टि-कोणों से रमण करती हो। इस प्रकार सुधा-समुद्र के मध्य से प्रकट हुई रमा के नाम को आप धारण करती हो, यह सत्य है।

***

(३१४) श्रीराकेन्दु-वदना

'राकेन्दु' का अर्थ है–पूर्ण चन्द्र–'कलाहीने सानुमतिः, पूर्णे राका निशाकरे।' इससे पूर्ण-चन्द्र अर्थात् पूर्ण कला अर्थात् १६ कलाओं से पूर्ण चन्द्र-'वदना' अर्थात् मुखी है, ऐसा बोध होता है। इसका आध्यात्मिक रहस्य कलाओं के रहस्य-ज्ञान से स्पष्ट होता है।

उक्त 'रमा' और 'राकेन्दु-वदना' इन दोनों नामों से 'श्री'-वीज का उद्धार होता है क्योंकि रमा-वीज श्री है। इसे पूर्ण-चन्द्र अर्थात् विन्दु से युक्त करने से श्रीं वीज बनता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! शुक्ल पुष्पों और वस्त्रों से आवृत्त तथा पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान मुखवाली माता श्रीललिताम्बा का ध्यान करो और ज्ञान-विज्ञान से दीप्यमान होकर प्रसिद्ध हो जाओ।

***

(३१५) श्रीरति-रूपा

रति ही रूप है जिसका। यह काम वा कामेश्वर की पत्नी है। इससे यह काम-कला वा क्लीं-वीज-रूपा है, यह बोध होता है। रति-वीज 'क्लीं' है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! रति-स्वरूपा तथा रति-प्रीति-स्वरूपिणी माता श्रीललिताम्बा को हृदय में ध्याओ और मधु से मधुर व मनोहर बन जाओ।

***

(३१६) श्रीरति-प्रिया

रति की प्रिया अथवा रति जिसकी प्रिया है। 'रति' से यहाँ सामरस्य से तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! प्रेम और भक्ति तथा उत्कृष्ट अनुराग को रति कहते हैं। यह रति आपकी प्रेयसी है, प्यारी है अथवा आप उसको प्रिय हैं। इस प्रकार आप सभी प्रकार से रति-प्रिया सिद्ध होती हो।

***

(३१७) श्रीरक्षाकरी

रक्षा के दो अर्थ हैं–१. रक्षण, २. भस्म। इस प्रकार इस नाम से स्थिति-कर्त्री और संहार-कर्त्री दोनों का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे समस्त चराचर की रक्षा करनेवाली माता श्रीललिताम्बा! आपको पाकर अर्थात् आपकी शरण में जाकर भक्त इतने निर्भय हो जाते हैं कि वे न शत्रु से, न दस्यु से, न मौत से ही डरते हैं।

***

(३१८) श्रीराक्षसघ्नी

राक्षस को मारनेवाली। 'राक्षस'-दैत्य के सदृश एक विशिष्ट योनि है। मनुष्य होकर भी अमानुषी वृत्ति करनेवाले को भी 'राक्षस' कहते हैं, विशेषतः अत्यन्त क्रूर कर्म करनेवाले को। यहाँ 'राक्षस' से तात्पर्य है-राक्षसी सर्गों अर्थात् गीतोक्त आसुरी सर्गों से।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! वेदों तथा देवों से द्वेष करनेवाले, धर्म को लुप्त करनेवाले जो राक्षस हैं, उन्हें आप नष्ट कर देती हो। इसलिए भक्त आपको राक्षसघ्नी कहते हैं।

***

(३१९) श्रीरामा

लक्ष्मी। प्रत्येक सुन्दर स्त्री को भी 'रामा' कहते हैं। 'रमयति इति रामा' अर्थात् रमण कराती है। यह 'रमणात् रामः'-परब्रह्म-रूपी राम की स्त्री-लिङ्ग-वाचक संज्ञा है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप सदैव योगियों के हृदय में रमण करती हो। ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश को यथेष्ट रमण कराती हो। अतएव आपका प्रिय नाम रामा है और आपका यह नाम रामा जगत् में सभी को प्रिय है।

***

(३२०) श्रीरमण-लम्पटा

रमण अर्थात् सम्भोग या क्रीड़ा की लालसा जिसकी है। देवी का भी यही अर्थ होता है, जब 'दिव् क्रीडायां' व्युत्पत्ति की जाती है। इससे लीला-मयी का बोध होता है। यही रमण-लम्पटता अर्थात् 'इच्छा-शक्ति' है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपके पर-शिव मे सदा रमण करनेवाले स्वरूप का ध्यान करते हुए, जो भक्त आपके मन्त्र को अर्ध-रात्रि में जपते हैं, वे राज्य-लक्ष्मी के कृपा-पात्र बन जाते हैं।

***

(३२१) श्रीकाम्या

जिसको पाने की इच्छा हो। यहाँ अपर काम्यों से नहीं, अपितु सर्व-श्रेष्ठ परम कमनीय पदार्थ या परमार्थ से तात्पर्य है। कृष्ण-पक्ष की द्वादशी के रवि की तान्त्रिक संज्ञा भी 'काम्या' है।

◆◆प्रार्थना◆◆

जो मोक्षाभिलाषी साधकों और भक्तों द्वारा काम्या अर्थात् चाही जाती है, वह विश्वेश्वरी परा अम्बा माता श्रीललिता मुझे सुख के साथ भव-सागर से पार लगावें।

***

(३२२) श्रीकाम-कला-रूपा

'काम' अर्थात् कामेश्वर की 'कला' अर्थात् शक्ति-रूपा। नील-पर्वत-वासिनी कामाख्या भगवती के नाम से संसार में साधारण रूप से प्रसिद्ध है। इसका विशद ज्ञान 'काम-कला-विलास तन्त्र' के मनन से होता है। इस नाम से 'विन्दु-त्रयं हार्ध-कला' के प्रथम विन्दु कामाख्या-चरमा (सबसे श्रेष्ठ) कला का बोध होता है। तात्पर्य यह है कि यह ब्रह्म-योनि अर्थात् विश्व की कारण है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! काम-कला 'ई' को नाद और चन्द्र (अनुस्वार) से युक्त कर आपको जो ध्याता है, उसकी सभी कामनाएँ सिद्ध होती हैं।

***

(३२३) श्रीकदम्ब-कुसुम-प्रिया

'कदम्ब' नाम के फूल को पसन्द करनेवाली। 'कदम्ब' का रहस्यार्थ २१ वें नाम की व्याख्या में देखें।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! कदम्ब वृक्ष के नीचे बैठकर, नवीन विकसित कदम्ब के पुष्पों से, कदम्ब-कुसुम-प्रिया माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ, उनके मन्त्र को जपो और शीघ्र ही धनाधीश्वर अर्थात् धनाढ्य हो जाओ।

***

(३२४) श्रीकल्याणी

कल्याण करनेवाली अर्थात् मङ्गल-स्वरूपा। 'कल्यं शुभात्मक-शब्द अणाति वदति या सा कल्याणी' अर्थात् शुभ वाणी बोलनेवाली 'कल्याणी' है। इस भगवती की मूर्ति मलयाचल पर है (पद्म-पुराण) 'कल्याणी मलयाचले'।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपकी सर्व प्रकार से कल्याण करनेवाली कल्याणी कथा सभी प्रकार के श्रेय देती है, शरीर में नैरोग्य सींचती है, पापों को निकाल देती है, अनुताप-सन्ताप-पश्चाताप सभी को दूर करती है।

***

(३२५) श्रीजगती-कन्दा

जगत् की कन्द अर्थात् मूल वा पूरक। 'कन्द स्यात् पूरणे सक्ष्य-मूले जल-धरेऽपि च' (यादव कोष)।

◆◆स्तुति◆◆

बुद्धि को समुज्ज्वल करनेवाली, सर्वैश्वर से सम्पन्न, भक्तों के सभी कार्यों को पूरा करनेवाले कल्प-वृक्ष के समान तथा संसार के बन्धन तोड़नेवाली, आनन्द प्रदान करनेवाली, तीनों भुवनों की कन्द-मूल-रूपिणी त्रिपुर-सुन्दरी माता श्रीललिता को हम प्रणाम करते हैं।

***

(३२६) श्रीकरुणा-रस-सागरा

कारुण्य-रस का सागर जिसमें है अर्थात् संसार में सबसे बढ़कर करुणा-मयी है। कारण यह अपने शत्रुओं अर्थात् अभक्तों पर भी दया करती है (सप्तशती)–'**वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम्**'। पुनः '**लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्र-पूता, इत्थं मतिर्भवति तेष्वहितेषु साध्वी**' (सप्तशती)।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप भक्तों की अभिलाषा पूर्ण करने हेतु कामधेनु के समान हो। इन्द्रादि देव-गणों द्वारा पूजित चरण कमलवाली माता श्रीललिता, आप ही करुणा-रस की सागर हो। उद्दण्ड उपद्रवी भण्डासुर, महिषासुर, अरुणासुर, दुर्गमासुर आदि अनेक दानवों के द्वारा दुःखी ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि देवों को सुरक्षित करती हुई, हम भक्तों के दारिद्र्य-दुःख-शोक दूर करने हेतु आप ही करुणा-रस की सागर हो।

***

(३२७) श्रीकला-वती

कलावाली। यहाँ '**कला**' से पूर्ण-कला का ही बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! चौंसठ कलाएँ जिसमें हैं, ऐसी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ, पूजो और आश्चर्यकारी कला-धर बन जाओ।

***

(३२८) श्रीकलाऽऽलापा

मधुर ध्वनि करनेवाली। इससे उस मधुर अन्तर्नाद का बोध होता है, जिसे योगी ही सुनते हैं और सुनकर आनन्द-विभोर रहते है। '**कं ब्रह्म तस्य लाला-वत् लक्षण्या अति सुलभः आपः प्राप्तिर्यस्याः सकाशात्**' अर्थात् कं नाम ब्रह्म का है, उसकी लार जैसी लक्षणाओं से सुलभ प्राप्ति जिससे हो, उसे '**कलाऽऽलापा**' कहते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

जिसके कल मधुर मञ्जुल ब्रह्म-ज्ञानियों को भी सुनने के लिए दुर्लभ हैं, उन विश्व-मोहन करनेवाली त्रिपुर-सुन्दरी महा-विद्या श्रीललिताम्बा की हम वन्दना करते हैं।

***

(३२९) श्रीकान्ता

कमनीयता जिसमें हो, उसे 'कान्ता' कहते हैं। इससे परम शिव-कान्ता का बोध होता है। इस नाम का रहस्यार्थ है–'**कं ब्रह्मैवान्तः सिद्धान्तो यस्याः सा**' अर्थात् 'कं' या 'ब्रह्म' का सिद्धान्त जिसका हो। इससे भगवती '**ब्रह्म-रूपिणी**' हैं, यह ज्ञात होता है।

'**कृष्ण-पक्ष**' की '**एकादशी तिथि**' की '**रात्रि**' की संज्ञा भी '**कान्ता**' है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! कामेश्वर पर-शिव से चाही गई एवं उपनिषदों में वर्णित आप कान्ता को जो भक्त कमलासन से बैठ कर हृदय में ध्यान करते हैं, वे शाम्भवी नाम की परा अवस्था के अनुभव प्राप्त करते हैं।

***

(३३०) श्रीकादम्बरी-प्रिया

'कादम्बरी' नामक मदिरा को पसन्द करनेवाली। 'श्रुति' भी कहती है कि–

परिश्रुतं झख - माद्यं पलं च भक्तानि योनिः सुपरिष्कृतानि।
निवेदयन् देवतायै महत्यै स्वात्मीकृत्य सुकृती सिद्धिमेति।।

'कादम्बरी' कोयल को भी कहते हैं, उसकी प्रिया।

पुनः '**कादम्बरी**' सरस्वती की भी एक संज्ञा है। **कदम्ब** फूल से बनी वस्तु को भी '**कादम्बरी**' कहते हैं।

'**कदम्ब**' शब्द का अर्थ है–'**कदं कदनं विनाशं वाति गच्छति अन्ते**' अर्थात् प्रलय-काल में जिसका विनाश हो। इससे विश्व का बोध होता है। इस भाव में '**विश्व-क्रीड़ा**' की प्रिया है, ऐसा बोध होता है।

'**कदम्ब**' का अर्थ जितेन्द्रिय तत्त्व-ज्ञानी भी है–'**कं प्रजापत्यधिष्ठातृकं औपस्थेन्द्रियं दमयति**'। इस भाव में जितेन्द्रिय तत्त्व-ज्ञानी के भावों की प्रिया है, यह बोध होता है।

अथवा '**कादम्बं राति-ददाति इति कादम्बरः+ङीप्**' या '**कं ब्रह्म दमयति कदम्बः**' ऐसी भी व्युत्पत्ति हो सकती है। इस प्रकार अनेक अर्थ हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे उत्तम सुरा को पसन्द करनेवाली, हे पथ्य हितकर अनेक प्रकार की सुराओं से तृप्त की गई कादम्बरी-प्रिया माता श्रीललिता! आप प्रणत जनों को अपनाकर सालोक्य-गामी बना देती हो।

***

(३३१) श्रीवरदा

वर देनेवाली। 'वर'-शब्द नपुंसक और पुल्लिङ्ग दोनों है। यहाँ नपुंसक-वाचक अर्थ ही युक्त है। इससे श्रेष्ठ से सर्व-श्रेष्ठ पदार्थ अर्थात् मोक्ष की देनेवाली का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे शारदीय नवरात्र में आराधित महान् ओज देनेवाली महा-देव महा-कामेश्वर पर-शिव की पट्टरानी माता श्रीललिताम्बा! आप साधना-निष्ठ साधकों को, संयमवाले भक्तों को नाना प्रकार के वरदान देती हो। इसमें सन्देह नहीं।

***

(३३२) श्रीवाम-नयना

'वाम' श्रेष्ठ या सुन्दर-वाचक संज्ञा है। इस भाव में सुन्दर-लोचना है।

'वामं वामेन शिवेन दर्शितं मार्ग-विशेषं नयतीति वाम-नयना' अर्थात् **'वाम-मार्ग'** की दिखलानेवाली।

'वाम एव नयनो यस्याः सा' अर्थात् वाम या शिव ही जिसका नयन है अर्थात् शिव या काल के द्वारा ही विश्व को देखनेवाली अर्थात् उपभोग करनेवाली। इससे उपहित चेतना अर्थात् शिव-युक्त शक्ति का बोध होता है।

'वाम' का एक अर्थ कर्म-जन्य फल भी है। **'श्रुति'** भी कहती है– **'एष उ एव वामनीः।'** इस भाव में **कर्म-फल की देनेवाली है।** इससे **'योग-वाशिष्ठ'** में कथित नियति से तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे कामेश पर-शिव की वाम-लोचना सुन्दर रम्य नयनवाली कामेश्वरी भगवती त्रिपुर-सुन्दरी माता श्रीललिताम्बा! आपकी दृष्टि कज्जल-कला से श्याम है, तो भी आप अपनी ओर झुकनेवाले भक्तों के आशयों को उज्ज्वल और विपुल उदार बनाती हो। आपका यही वैचित्र्य है।

अथवा, हे नीति विद्या की नायिका माता श्रीललिताम्बा! आप अपने भक्तों को निर्विकल्प वाम-मार्ग पर ले आती हो, फिर अपनी अत्यन्त रमणीय दृष्टि से उन्हें देखती हो। दोनों ही कारणों से आप वाम-नयना सिद्ध होती हो।

***

(३३३) श्रीवारुणी-मद-विह्वला

खजूर के रस के मद या मद्य-पान से आनन्दिता। **'वारुणी'** के अनेक अर्थ हैं। **'वरुणस्येयं वारुणी'** अर्थात् वरुण (जल-देवता) के सम्बन्धी को **'वारुणी'** कहते हैं। इससे **'अमृत'** का भी बोध होता है, जिसके पान-जन्य आनन्द से **'विह्वला'** है अर्थात् बाह्य पदार्थों को भूल गई है। **'विह्वला'** से अन्तर्विह्वला का बोध नहीं है।

अथवा **'वारुणी'** का अर्थ **सहस्र-फणी शेष भगवान्** भी हैं। इनके द्वारा पृथ्वी-धारण में अविह्वल के समान ही यह अविह्वला है, ऐसा बोध होता है–**'वारुणी-मत्+अविह्वला।'**

अथवा **'वारुणीमन्तः अविह्वला यया'** अर्थात् वारुणी नाड़ी को जीतनेवाले या वश में करनेवाले योगी अविह्वल अर्थात् बलवान (अन्तर्बली) होते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप जैसी करुणानिधान दयालु का आश्रय लेकर, शोधित सुरा से उल्लसित साधक फिर संसार में नहीं होते हैं, वे शिव-भाव को प्राप्त हो जाते हैं।

***

(३३४) श्रीविश्वाधिका

विश्व से अधिक। इससे रुद्र का भी बोध होता है (श्रुति)–'विश्वाधिको रुद्रो महर्षिः'। तात्पर्य यह है कि भगवती इस विश्व के पाँचों ईश्वरों अर्थात् १. ब्रह्मा, २. विष्णु, ३. रुद्र, ४. ईश्वर और ५. सदा-शिव से भी परे हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! विश्व शिव आदि क्षिति पर्यन्त छत्तीस तत्त्वों का परिणाम है। इससे आप अधिका हो। आपके मन्त्र का जप करनेवाले सिद्ध लोग भी, शिवादि क्षिति पर्यन्त विश्व का विवेचन करते हुए, आपके शुद्ध अद्वैत का अनुभव कर शीघ्र ही विश्व से भी अधिक स्थिति को प्राप्त कर लेते हैं। आप में लय हो जाते हैं।

***

(३३५) श्रीवेद-विद्या

वेदों से ज्ञेया। 'श्रुति' भी कहती है कि 'वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः।' भगवती के घर चिन्तामणि के चारों द्वार 'वेद-रूपी' हैं। इन्हीं वेद-रूप द्वारों से वहाँ तक प्रवेश है, ऐसा बोध होता है। 'श्रुति' भी कहती है कि ऋग्वेद पूर्व, यजुर्वेद दक्षिण, अथर्वण पश्चिम और साम उत्तर के द्वार हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! भू-मण्डल पर वही पुरुष धन्य हैं और विश्व में वही सब तत्त्व विदों में श्रेष्ठ हैं, जिसके हृदय में सभी वेदों द्वारा जानने योग्य आप उदित होती हो।

***

(३३६) श्रीविन्ध्याचल-निवासिनी

विन्ध्य पर्वत पर निवास करनेवाली। 'विन्ध्य-क्षेत्र' इसी कारण एक प्रसिद्ध 'पीठ-स्थान' माना गया है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! भक्ति से विन्ध्याचल-निवासिनी माता श्रीललिता को ध्याओ, पूजो और मन के सभी संशयों को काटते हुए, अपने कर्मों की गाठों को तोड़ डालो।

***

(३३७) श्रीविधात्री

विश्व को पालनेवाली–'विदधाति धारयति पोषयति।' अथवा विधाता अर्थात् ब्रह्मा की स्त्री (शक्ति)। अथवा धात्री (फल) जिसे विशिष्ट रूप से प्रिय हो–'विशिष्टा विशेष-प्रीति-विषया धात्री यस्याः।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप जगत् को उत्पन्न करती हो, फिर उसमें स्वयं प्रवेश करती हो तथा अपनी शक्ति से उसे पालती हो। अतएव विद्वान् आपको विधात्री कहते हैं।

***

(३३८) श्रीवेद-जननी

वेदों की माता। वेदों को उत्पन्न करनेवाली महा-शक्ति। 'श्रुति' कहती है कि 'ऋचः सामानि जज्ञिरे।' इससे परां वाक्-शक्ति का बोध होता है। यह शक्ति कुण्डली-रूपा है। 'देवी-पुराण' भी कहता है कि-'यतः श्रृङ्गारकाकार-कुण्डलिन्याः समुद्गता, स्वराश्च व्यञ्जनानीति वेद-माता ततः स्मृता।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! महत् तत्त्ववाले आपके श्वासों के अनुसार कल्पादि काल में सारे वेद उदित हुए हैं। आप से ही ज्ञान का उदय होता है। आप ही से ज्ञान प्राप्त कर सभी सुर-गण आपको वेद-जननी कहते हैं।'

***

(३३९) श्रीविष्णु-माया

व्यापन-शील अर्थात् देश-कालादि से अनवच्छिन्न ब्रह्म की माया अर्थात् आवरण करनेवाली। इससे गुण-मयी शक्ति का बोध होता है।

'विष्णु एव मायो यस्याः सा विष्णु-माया' अर्थात् विष्णु ही जिसका आवरण या परिच्छेदक हो वह। यहाँ विष्णु की व्युत्पत्ति-'व्यापनात् विष्णुः' न होकर 'वैषति सिञ्चति आप्यायते विश्वं' है। इस भाव में महा-शक्ति का परिच्छेदक विष्णु-नाम और रूप परिच्छेदवाला पालक इस महा-शक्ति का आवरण है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! चराचर विश्व में प्रविष्ट हुई आपकी शक्ति ही विष्णु है। आप ही विश्व का अपनी शक्ति के द्वारा मान-माप करती हो, नापती हो। इस कारण आपका नाम विष्णु-माया है।

***

(३४०) श्रीविलासिनी

विलास अर्थात् भोग करनेवाली। अथवा 'विक्षेप-लासः शक्तिर्यस्याः सा।' एक विशेष 'पीठ-शक्ति-रूपा' है, ऐसा भी तात्पर्य है। 'नित्या', 'विलासिनी', 'दोग्ध्री' आदि पीठ-शक्तियाँ हैं। अथवा 'विल' अर्थात् रन्ध्र (यहाँ 'ब्रह्म-रन्ध्र' से तात्पर्य है) में रहनेवाली-

'विले ब्रह्म-रन्ध्रे आस्ता इति विलासिनी।'

◆◆स्तुति◆◆

हे विक्षेपिका शक्ति माता श्रीललिताम्बा! क्रीड़ा करने के स्वभाव से आप ही स्थूल-सूक्ष्म, समष्टि-व्यष्टि सभी भावों के रूप में विकसित होती हुई, विलासिनी रूप से नित्य प्रकाशित हो रही हो।

***

(३४१) श्रीक्षेत्र-स्वरूपा

'क्षेत्र' से 'व्यष्टि'-शरीर और 'समष्टि'-शरीर अर्थात् विश्व दोनों से तात्पर्य है। अथवा क्षेत्र से परिच्छिन्न और अपरिच्छिन्न दोनों क्षेत्रों का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! क्षेत्र-पन तो आप में सहज ही सिद्ध है क्योंकि आप जगत् की उत्पाद भूमि हो। जहाँ जो उत्पन्न हो, वह उसका क्षेत्र कहलाता है और शिवादि क्षिति पर्यन्त तनु-मय क्षेत्र ही आपका रूप है। इस प्रकार संसार में उच्च भाव रखनेवाले किसी का भी पूजन, आप ही का पूजन है और किसी को भी प्रणाम, आपको ही प्रणाम है।

***

(३४२) श्रीक्षेत्रेशी

व्यष्टि और समष्टि क्षेत्रों की स्वामिनी। इससे सर्व-श्रेष्ठा या चरमा शक्ति का बोध होता है। क्षेत्र से काम-रूपादिक पृथ्वी से लेकर शिव तक के ३६ तत्त्वों का तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! पृथ्वी-मण्डल के तत्त्व-व्यूह-स्वरूपी सभी क्षेत्रों की प्रभु होने से माता श्री ललिताम्बा ही क्षेत्रेशी हैं। क्षेत्रेशी श्रीललिताम्बा को अपने चित्त में सतत् चिन्तन करो और तत्त्वज्ञता को पाओ।

***

(३४३) श्रीक्षेत्र-क्षेत्रज्ञ-पालिनी

क्षेत्र अर्थात् शरीर और क्षेत्रज्ञ अर्थात् जीवात्मा या भोगनेवाली—दोनों की पालनेवाली। क्षेत्र भी यही है और क्षेत्रज्ञ भी यही। 'गीता' (१३१) में भी कहा है कि—

'इदं शरीरं कौन्तेय!, क्षेत्रमित्यभिधीयते।
एतद् यो वेत्ति तं प्राहुः, क्षेत्रज्ञ इति तद् विदुः।
क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि, सर्व-क्षेत्रेषु भारत !'

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ—इन दोनों की पालिनी से दोनों के ज्ञानी का तात्पर्य है। 'क्षेत्र-क्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं, मत् तज्ज्ञानं मतं मम' (गीता)।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! ईश्वर और जीव-इन दोनों में से कोई क्षेत्र हो, क्षेत्रज्ञ हो, आप क्षेत्र व क्षेत्रज्ञ दोनों का पालन करनेवाली हो।

***

(३४४) श्रीक्षय-वृद्धि-विनिर्मुक्ता

क्षय और वृद्धि अर्थात् अपचय और उपचय क्षेत्र-सम्बन्धी दो भाव-विकार हैं। इस नाम से यह बोध होता है कि क्षेत्र-स्वरूपा होती हुई भी क्षेत्र के दोनों विकारों से रहिता हैं। 'कठोपनिषद्' में भी कहा है कि-'एष नित्यो महिमा ब्रह्मणस्य न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्।'

◆◆प्रार्थना◆◆

क्षय और वृद्धि, घट और बढ़ से रहित, सदा समान प्रतीत होनेवाली तथा लावण्य को बरसानेवाली, माता श्रीललिता के सुन्दर चरण-कमलों की अनिवर्चनीया कान्ति हमारे अन्तर मन में सदा प्रवेश करती रहे।

***

(३४५) श्रीक्षेत्र-पाल-समर्चिता

क्षेत्र-पाल द्वारा सम्यक् प्रकार से पूजिता। क्षेत्र-पाल से 'बटुक शिव' और 'विष्णु' दोनों का तात्पर्य है। वटुक-शिव (बटुक-भैरव)-'शिव' के अवतार हैं, जिसकी कथा 'लिङ्ग-पुराण' में यह दी है कि जब 'भगवती काली' ने क्रुद्ध हो 'दारुकासुर' का वध किया, तब उस क्रोध से तीनों लोक भस्म होने लगे। यह देख 'भगवान् शिव' एक बहुत छोटे बच्चे का रूप धारण कर रोने लगे। 'जगदम्बा काली' में वात्सल्य-रस उत्पन्न हुआ और बच्चे को स्तन्य-पान कराया। इससे 'भगवती काली' का क्रोध शान्त हो गया, जिससे विश्व की रक्षा हुई। इसी से 'बाल शिव' का नाम 'क्षेत्र-पाल' पड़ा।

समष्टि-रूपी क्षेत्र अर्थात् विश्व के पालन-कर्त्ता 'विष्णु' हैं। इससे 'विष्णु' भी 'क्षेत्र-पाल' हैं।

'क्षेत्र-पाल' से 'बुद्धि-शक्ति' का भी तात्पर्य है, कारण बुद्धि से ही क्षेत्र अर्थात् शरीर पालित होता है-'नानुसन्धेः परा पूजा' (श्रुति)।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सभी क्षेत्र-पालों से पूजित होनेवाली विश्व-जननी जगदम्बा श्रीललिता जी को ध्यान में रखकर, सभी प्रकार के कर्मों को प्रारम्भ करो और उनके शुभ परिणाम को शीघ्र ही पाओ।

***

(३४६) श्रीविजया

विशिष्ट जयवाली। 'विजया' पौराणिक संज्ञा भी है। पद्म नामक दैत्य-राज को जीता था, इससे 'विजया' नाम पड़ा (देवी पुराण)-

विजित्य पद्म-नामानं, दैत्य-राजं महा-बलं।
त्रिषु लोकेषु विख्याता, विजया चापराजिता।।

विश्व-कर्म-शास्त्र में प्रसिद्ध 'विजया' नाम का एक विशेष गृह भी है। 'विजय' नाम का मुहूर्त भी होता है। 'रत्न-कोष' के अनुसार यह सन्ध्या-समय के कुछ ही पश्चात् का समय है, जब तारे दीख पड़ते हैं। फिर 'विजया' तिथि-विशेष की भी संज्ञा है। यह है आश्विन शुक्ल पक्ष की दशमी। इसी से इसे विजया-दशमी कहते हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जो दैत्यों को जीतकर और दुर्गुणों पर विजय पाकर, समृद्धि-सम्पन्न राज्य सुरों को दे देती हैं, उन उच्च उत्कर्षवाली उदार विजया माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ और सर्वत्र विजय को प्राप्त कर दुर्गुणों से दूर हो जाओ।

***

(३४७) श्रीविमला

'विगतो मलो यस्याः सा' अर्थात् जिसमें अविद्या-रूपी मल न हो। **'विमला'** एक मूर्ति-विशेष की और एक गृह-विशेष की भी संज्ञा है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अविद्या के सभी मलों से सुदूर, प्रकाशमान, उज्ज्वल माता विमला श्रीललिताम्बा के मन्त्र का जप करो और अमृत-भाव को प्राप्त करो।

***

(३४८) श्रीवन्द्या

वन्दना करने की योग्या। वन्दना के अनेक तात्पर्य हैं। सामान्य अर्थ है आदर-भाव दिखाना, परन्तु रहस्यार्थ है–मनन।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! दैहिक, दैविक तथा भौतिक–तीनों तापों और ज्वरों से जर्जर हुए लोकों का आप निष्कारण दया से उद्धार करती हो। ऐसी स्थिति में आप क्या सुरों, क्या असुरों सभी की वन्द्या हो।

***

(३४९) श्रीवन्दारु-जन-वत्सला

'वन्दारुः–वदि+आरुः' अर्थात् वन्दन करनेवाले लोगों पर दया करनेवाली। तात्पर्य यह है कि मनन करनेवालों पर ही ठीक से दया करनेवाली हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि तुम ऐश्वर्य और यश एवं नैरोग्य तथा सम्पत् प्राप्त करना चाहते हो, तो वन्दारु-जन-वत्सला महेश्वरी श्रीललिता पराम्बा को भजो क्योंकि वे वन्दना करनेवालों पर वात्सल्य रखती हैं।

***

(३५०) श्रीवाग्वादिनी

शब्द बोलनेवाली या बुलवानेवाली–'वाचं वदति वादयति वा।'

वाग्वादिनी नाम की भगवती की एक विशेष मूर्ति भी है। 'त्रिपुरा-सिद्धान्त' कहता है कि–

सर्वेषां च स्व-भक्तानां, वाद-रूपेण सर्वदा।
स्थिरत्वाद् वाचो विख्याता, लोके वाग्वादिनी सा।।

'लघु-स्तव' भी कहता है कि–'शब्दानां जननी त्वमेव भुवने वाग्वादिनीत्युच्यसे।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी–इन चारों प्रकार की वाणी को प्रवृत्त करनेवाली आप वाग्-वादिनी को जो भक्त भजते हैं, ध्याते हैं, पूजते हैं, वे जगत् में वश्य-वाक् अर्थात् जिनके वशीभूत वाक्-शक्ति हो कहलाते हैं।

***

(३५१) श्रीवामकेशी

वाम अर्थात् श्रेष्ठ या सुन्दर केश जिसके हैं। '**वामकस्य ईशः वामकेशः तस्य शक्तिः वामकेशी**' अर्थात् शिवा। अथवा **वामकेश (वामकेश्वर)** तन्त्र में प्रतिपादिता।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपके कुन्तलों का सौन्दर्य कुछ विशिष्ट प्रकार का है, इसकी नित्य नील-प्रभा कुछ और ही प्रकार की है, इनका स्निग्धपन भी नित्य कुछ नया ही प्रतीत होता है, इनकी चमक भी अन्य प्रकार की है। यही कारण है कि ऐसी वाम-केशी सुन्दर रम्य केशवाली आपको शम्भु महादेव आधे क्षण भर भी छोड़ना नहीं चाहते।

***

(३५२) श्रीवह्नि-मण्डल-वासिनी

'**वह्नि-मण्डल**' से मूलाधार का बोध होता है। यों तो '**वह्नि-मण्डल**' में '**मूलाधार**' और '**स्वाधिष्ठान**'–दोनों चक्र हैं, परन्तु '**कुण्डली**' **प्राण-शक्ति**–'**मूलाधार**' में ही निवास करती है। इससे मूलाधार-निवासिनी है, यही तात्पर्य युक्त है।

फिर '**वह्नि-मण्डल**'–**परमाकाश** में भी है। अतः '**परमाकाश**'-वासिनी है, ऐसा भी बोध होता है। पुनः '**वह्नि**' शब्द से अवच्छिन्न पर तीन संख्या का बोध होता है। इस भाव में चन्द्र, सूर्य और अग्नि तीनों मण्डलों की वासिनी है, ऐसा भी तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको अपनी नाभि के वह्नि-मण्डल में निवास करनेवाले अथवा सूर्य-चन्द्र-अग्नि-तीनों मण्डल में निवास करनेवाले स्वरूप में, लाल-लाल वर्ण की ध्यातें हैं, वे सूर्य-चन्द्र-अग्नि-मण्डलों पर अधिकार कर लेते हैं और अपने उदरस्थ वैश्वानर को उदञ्चित अर्थात् उच्च-से-उच्च विचारोंवाला कर लेते हैं।

***

(३५३) श्रीभक्ति-मत्-कल्प-लतिका

अपूर्ण या अर्ध-भक्तों को पूर्ण भक्ति-भाव देकर सन्तुष्ट करनेवाली। इससे यह बोध होता है कि अन्य अपूर्ण ब्रह्म-रूपी देवताओं की भक्ति करने से पूर्णता में जो त्रुटि रह जाती है, उसे पूर्ण ब्रह्म-स्वरूपिणी भगवती की भक्ति दूर करती है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जो दैत्यों को जीतकर और दुर्गुणों पर विजय पाकर, समृद्धि-सम्पन्न राज्य सुरों को दे देती हैं, उन उच्च उत्कर्षवाली उदार विजया माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ और सर्वत्र विजय को प्राप्त कर दुर्गुणों से दूर हो जाओ।

***

(३४७) श्रीविमला

'विगतो मलो यस्या: सा' अर्थात् जिसमें अविद्या-रूपी मल न हो। 'विमला' एक मूर्ति-विशेष की और एक गृह-विशेष की भी संज्ञा है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अविद्या के सभी मलों से सुदूर, प्रकाशमान, उज्ज्वल माता विमला श्रीललिताम्बा के मन्त्र का जप करो और अमृत-भाव को प्राप्त करो।

***

(३४८) श्रीवन्द्या

वन्दना करने की योग्या। वन्दना के अनेक तात्पर्य हैं। सामान्य अर्थ है आदर-भाव दिखाना, परन्तु रहस्यार्थ है-मनन।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! दैहिक, दैविक तथा भौतिक-तीनों तापों और ज्वरों से जर्जर हुए लोकों का आप निष्कारण दया से उद्धार करती हो। ऐसी स्थिति में आप क्या सुरों, क्या असुरों सभी की वन्द्या हो।

***

(३४९) श्रीवन्दारु-जन-वत्सला

'वन्दारुः-वदि+आरुः' अर्थात् वन्दन करनेवाले लोगों पर दया करनेवाली। तात्पर्य यह है कि मनन करनेवालों पर ही ठीक से दया करनेवाली हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि तुम ऐश्वर्य और यश एवं नैरोग्य तथा सम्पत् प्राप्त करना चाहते हो, तो वन्दारु-जन-वत्सला महेश्वरी श्रीललिता पराम्बा को भजो क्योंकि वे वन्दना करनेवालों पर वात्सल्य रखती हैं।

***

(३५०) श्रीवाग्वादिनी

शब्द बोलनेवाली या बुलवानेवाली-'वाचं वदति वादयति वा।'

वाग्वादिनी नाम की भगवती की एक विशेष मूर्ति भी है। 'त्रिपुरा-सिद्धान्त' कहता है कि-

सर्वेषां च स्व-भक्तानां, वाद-रूपेण सर्वदा।
स्थिरत्वाद् वाचो विख्याता, लोके वाग्वादिनी सा।।

'लघु-स्तव' भी कहता है कि-'शब्दानां जननी त्वमेव भुवने वाग्वादिनीत्युच्यसे।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी–इन चारों प्रकार की वाणी को प्रवृत्त करनेवाली आप वाग्-वादिनी को जो भक्त भजते हैं, ध्याते हैं, पूजते हैं, वे जगत् में वश्य-वाक् अर्थात् जिनके वशीभूत वाक्-शक्ति हो कहलाते हैं।

***

(३५१) श्रीवामकेशी

वाम अर्थात् श्रेष्ठ या सुन्दर केश जिसके हैं। 'वामकस्य ईशः वामकेशः तस्य शक्तिः वामकेशी' अर्थात् शिवा। अथवा वामकेश (वामकेश्वर) तन्त्र में प्रतिपादिता।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपके कुन्तलों का सौन्दर्य कुछ विशिष्ट प्रकार का है, इसकी नित्य नील-प्रभा कुछ और ही प्रकार की है, इनका स्निग्धपन भी नित्य कुछ नया ही प्रतीत होता है, इनकी चमक भी अन्य प्रकार की है। यही कारण है कि ऐसी वाम-केशी सुन्दर रम्य केशवाली आपको शम्भु महादेव आधे क्षण भर भी छोड़ना नहीं चाहते।

***

(३५२) श्रीवह्नि-मण्डल-वासिनी

'वह्नि-मण्डल' से मूलाधार का बोध होता है। यों तो 'वह्नि-मण्डल' में 'मूलाधार' और 'स्वाधिष्ठान'–दोनों चक्र हैं, परन्तु 'कुण्डली' प्राण-शक्ति–'मूलाधार' में ही निवास करती है। इससे मूलाधार-निवासिनी है, यही तात्पर्य युक्त है।

फिर 'वह्नि-मण्डल'–परमाकाश में भी है। अतः 'परमाकाश'-वासिनी है, ऐसा भी बोध होता है। पुनः 'वह्नि' शब्द से अवच्छिन्न पर तीन संख्या का बोध होता है। इस भाव में चन्द्र, सूर्य और अग्नि तीनों मण्डलों की वासिनी है, ऐसा भी तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको अपनी नाभि के वह्नि-मण्डल में निवास करनेवाले अथवा सूर्य-चन्द्र-अग्नि–तीनों मण्डल में निवास करनेवाले स्वरूप में, लाल-लाल वर्ण की ध्यातें हैं, वे सूर्य-चन्द्र-अग्नि-मण्डलों पर अधिकार कर लेते हैं और अपने उदरस्थ वैश्वानर को उदञ्चित अर्थात् उच्च-से-उच्च विचारोंवाला कर लेते हैं।

***

(३५३) श्रीभक्ति-मत्-कल्प-लतिका

अपूर्ण या अर्ध-भक्तों को पूर्ण भक्ति-भाव देकर सन्तुष्ट करनेवाली। इससे यह बोध होता है कि अन्य अपूर्ण ब्रह्म-रूपी देवताओं की भक्ति करने से पूर्णता में जो त्रुटि रह जाती है, उसे पूर्ण ब्रह्म-स्वरूपिणी भगवती की भक्ति दूर करती है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! भक्तों के लिए कल्प-लता-रूपिणी अर्थात् सर्व अभीष्ट देनेवाली माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ, पूजो और स्वयं भी अपने आश्रितों को इष्ट-दान करनेवाले बनो।

***

(३५४) श्रीपशु-पाश-विमोचिनी

'**पशु**' का स्थूलार्थ है–चार पैरवाला, पूँछ और सींगवाला जीव, परन्तु सूक्ष्मार्थ है–पशु-वत् ज्ञानी जीव और सूक्ष्मतर अर्थ है–अभेद-ज्ञान-रूप विद्या-विहीन जीव। '**पशु**' की '**श्रौत**' (वृहदारण्यक) परिभाषा अन्य प्रकार की है–'**योऽन्यां देवतामुपास्तेऽन्योऽसावन्योऽहमस्तीति न स वेद यथा पशुः**' अर्थात् जो अन्य देवता की उपासना करते हैं और अभेद-ज्ञान नहीं रखते, वे पशु हैं।

'**पशु-पाश**' के अनेक अर्थ हैं। '**पाश**' की व्युत्पत्तियाँ भी अनेक हैं। फिर पाश-शब्द को तोड़कर भी एक दूसरा अर्थ होता है–पशुप +आशः। समास की भिन्नता से इस व्युत्पत्ति के भी अनेक अर्थ हैं।

'**पशु-पाश-विमोचिनी**' का एक अर्थ यह है कि '**पशुप**' अर्थात् शिव को पाँसे के खेल (जुएँ) में हरानेवाली। दूसरा अर्थ यह है कि '**पशुप**' अर्थात् पर-शिव या ब्रह्म की आशा करनेवालों की विमोचिनी अर्थात् विशेष प्रकार से मोचन करनेवाली।

'**तन्त्र-शास्त्र**' के अनुसार '**पशु-पाश**' आठ हैं। '**पातञ्जल-दर्शन**' के अनुसार ये पाँच हैं। यथा–१. अविद्या, २. अस्मिता, ३. राग, ४. द्वेष और ५. अभिनिवेश। फिर किसी मत से १८ और ६२ हैं–'**तामिस्त्रस्याप्यष्टादश-विधत्वमाश्रित्य द्वि-षष्टिः पाशा इति केचित्**' (भास्कर राय)।

◆◆स्तुति◆◆

हे पशु-पाश-विमोचिनी माता श्रीललिताम्बा! शिव-शक्ति के ज्ञान से जो शून्य हैं, जो विद्या-विहीन हैं, वे भी जब आपको जाने-अनजाने भजते हैं, पूजते हैं, तो आप कृपा कर उनके भी पाशों को काट देती हो। मोक्ष हेतु उनको भी पाशों से छुड़ा देती हो।

***

(३५५) श्रीसंहृताशेष-पाखण्डा

सब **पाखण्डों** को सम्यक् रूप से नाश करनेवाली अथवा सभी **पाखण्ड-भावों** को मूल-सहित नाश करनेवाली। '**पाखण्ड**' की अनेक परिभाषाएँ हैं।

'**निरुक्त**' के अनुसार वेद के सिद्धान्तों या वाक्यों के खण्डन-कर्त्ता अर्थात् विरुद्ध करनेवाले या बोलनेवाले **पाखण्ड** हैं–'**पाशकेन तु वेदार्थः, खण्डाः स्युस्तस्य खण्डकाः।**'

पौराणिक परिभाषा है कि **वेद-बाह्य** क्रिया करनेवाले अर्थात् श्रुति-स्मृति से बहिष्कृत जो हैं, वे पाखण्ड हैं, परन्तु '**पाखण्ड**' से यथार्थ तात्पर्य दुरात्माओं से है, जो सोचते कुछ हैं, बोलते कुछ हैं और करते कुछ और ही हैं। यह भी आगम अर्थात् वेद और तन्त्र-शास्त्र के सिद्धान्तों के विरुद्ध ही है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! भण्डासुर, महिषासुर, अरुणासुर, शुम्भ, निशुम्भादि सभी दैत्यों को आपने उन्मूलित किया है। आप सभी प्रकार के पाखण्डों का संहार करनेवाली हो। जो भक्त आपको इस रूप में ध्याते हैं, वे भी पाखण्ड से मुक्त हो जाते हैं।

***

.(३५६) श्रीसदाचार-प्रवर्तिका

'सदाचार' का सामान्य अर्थ है—अच्छा आचार या क्रिया। इसके भी अनेक तात्पर्य हैं। 'सतां शिष्टानां आचारः सदाचारः' अर्थात् श्रेष्ठों का आचार 'सदाचार' है।

'ततो ब्रह्मणः आचारः सदाचारः' अर्थात् ब्रह्म का आचार 'सदाचार' है। 'सदा चरति इति सदा-चरः तस्य क्रिया सदाचारः' अर्थात् सर्वदा चलायमान अर्थात् काल, उसकी क्रिया की प्रवर्तिका अर्थात् शक्ति—काल-शक्ति।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! हयग्रीव नामक दैत्य द्वारा चुराए गए वेदों को, भगवान् विष्णु को हयग्रीव बनाकर उसका वध करवाकर, देवों को वापस दिलानेवाली सदाचार-प्रवर्तिका माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ और कदाचार से दूर हो जाओ।

***

(३५७) श्रीताप-त्रयाग्नि-सन्तप्त-समाह्लादन-चन्द्रिका

आत्मिक, दैविक और भौतिक—तीनों तापों अर्थात् आधि या दुःख की ज्वाला से खूब तप्त या तपे लोगों को ज्योत्स्ना-सदृश शीतल करनेवाली। इससे यह तात्पर्य है कि भगवती सांसारिक उत्कर्ष के साथ ही स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) की भी देनेवाली हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! आध्यात्मिक, आधि-भौतिक, आधि-दैविक—तीनों ताप-रूप तीन अग्नियों से तपे लोगों को शान्ति पहुँचानेवाली चाँदनी-स्वरूपा माता श्रीललिताम्बा का ध्यान करो और शाश्वत सदा स्थिर रहनेवाले सुख को प्राप्त करो।

***

(३५८) श्रीतरुणी

युवती। 'श्रुति'-वाक्य 'अजरोऽमृतः' के अनुसार कभी बूढ़ी न होनेवाली। इससे काल से परे होने का बोध होता है। अपचय और उपचय (बढ़ना और घटना) काल के द्वारा ही होते हैं। इससे कालातीता का नित्य-तरुणत्व स्वयं-सिद्ध है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! वेदों के अनुसार अजरोऽमृतवाली नित्य तारुण्यवाली माता श्रीललिताम्बा को नित्य ध्याओ और रोगादि से मुक्त होकर, माता का सान्निध्य प्राप्त करो।

***

(३५९) श्रीतापसाराध्या

तपस्वियों या तप करनेवालों की आराघ्या। दूसरी व्युत्पत्ति है–'तापस्तज्जनकः संसारस्तत्र सार-भूता' अर्थात् ताप से उत्पन्न संसार का सार, इसकी 'आध्या' अर्थात् सबे तरह से ध्यान करने योग्या–'आध्या आ समन्तात् ध्यानं यस्या इति।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जिन्होंने अनेक जन्मों में तप-रूपी सम्पतियाँ अर्जित की हैं, वे मनस्वी तपस्वी ही माता श्रीललिता के उपासक बनते हैं। तुम भी उन तापसाराध्या माता श्रीललिता की आराधना कर उनके कृपा-पात्र बनो।

***

(३६०) श्रीतनु-मध्या

'तनुः' अर्थात् पतली, 'मध्या' अर्थात मध्य भाग अर्थात् पतली कमरवाली। काञ्ची-प्रदेश में इस नाम की भगवती प्रसिद्ध हैं। अथवा 'तनु-मध्य-सम-वृत्त' विशेष रूपवाली को भी कहते हैं।

पिङ्गल-सूत्र भी कहता है–'तनु-मध्यात्यौ।' इसके अनुसार 'तनु-मध्या' की परिभाषा है–'पद-चतुरूर्ध्व-सूत्रात् प्रतिपादमित्ययानुवृत्या प्रतिपादं 'त'-गण-'य'-गणौ चेत् सा तनु-मध्ये तूच्यते'। अथवा कूर्म-पुराण के देवी-वाक्य–'गायत्री-छन्दसामहं' से भी इस रूप का बोध होता है।

'तनु'–शरीर या देह को भी कहते हैं। इसके मध्य अर्थात् बीच में रहनेवाली अर्थात् प्राण-शक्ति। इससे ब्रह्म-सूत्र के प्राणाधिकरण के प्रथम सूत्र 'अतएव प्राणः' में प्रति-पादित 'प्राणो ब्रह्म' का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! प्रति-दिन सन्ध्या समय कृश मध्य उदरवाली माता श्रीललिता को हृदय में धारण करो और धन-धान्य से पूर्ण धनाढ्य होकर, जगत् में अधिक-से-अधिक कल्याणकारी कर्म करो।

***

(३६१) श्रीतमोपहा

तम अर्थात् अन्धकार को दूर करनेवाली। इससे परं-ज्योति और महा-विद्या–दोनों का, जो तम-रूपी अज्ञान को दूर करनेवाली हैं, बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! तमो-गुण, अन्धकार, अविद्या को नष्ट करनेवाली माता श्रीललिता का हृदय में चिन्तन करो, उनके मन्त्र का जप करो और श्री व समृद्धि से सम्पन्न होकर, संसार में अविद्या के पथ से दूर हो जाओ।

***

(३६२) श्रीचिति

चेतना स्वतन्त्र शक्ति। इससे अविद्या-परिपन्थि-ज्ञान-स्वरूपा का बोध होता है। 'शक्ति-सूत्र'–'चिति' को स्वतन्त्रा विश्व सिद्धि-हेतु कहता है। 'महा-वाशिष्ठ' भी कहता है कि–'सैषा चितिरिति प्रोक्ता, जीवनाज्जीवितैषिणा'।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! योग के सूत्रों से आपका निरूपण होता है, शक्ति-सूत्र आपका सम्यक् प्रकार से वर्णन करता है, आप ही सूत्रों में वर्णित सर्वोत्कृष्ट चित्, चैतन्य-रूपिणी हो।

***

(३६३) श्रीतत्पद-लक्ष्यार्था

वह 'तत्'-पद अर्थात् वाक्य के लक्षणीय अर्थ-रूपा है। लक्ष्यार्थ यही है कि यह धर्मी शुद्ध ब्रह्म है। 'तत्' से केवल रूप और आनन्द आदि धर्म-विशिष्ट शक्ति का ही बोध नहीं होता, जैसा इस पद (तत्) का वाच्यार्थ है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! मनीषी धीर विद्वान् लोग अद्वैत-सिद्धि के लिए जिस नित्या शक्ति को लक्ष्य करते हैं, आप वही तत्पद-स्वरूपा शुद्ध संवित् हो। आप हमारे हृदय में सदैव प्रकाशित होती रहें।

***

(३६४) श्रीचिदेक-रस-रूपिणी

चित् या चेतन के रसों की अभिन्न-रूपिणी अर्थात् पूर्वोक्त संज्ञा से द्योतित धर्मी शक्ति अपनी धर्म-शक्तियों से अभिन्न-स्वरूपा है। यह कर्ता और कारण–इन दोनों में अभिन्नता सिद्ध करनेवाला नाम है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! तीनों गुणों को समझने के लिए आप चिन्मात्र एक-रस-रूपिणी को, जो भक्त हृदय से जान लेते हैं अथवा पहचान लेते हैं, वे आपके अद्वय-भाव को प्राप्त होते हैं।

***

(३६५) श्रीस्वात्मानन्द-लवी-भूत-ब्रह्माद्यानन्द-सन्तति

अपनी आत्मा के आनन्द से उत्पन्न ब्रह्मादि अर्थात् इच्छा, ज्ञान और क्रिया-शक्तियों के आनन्द के समूहवाली। इसका यह तात्पर्य है कि धर्मी शक्ति के आनन्द से लेकर धर्म-शक्तियों के जितने आनन्द हैं, सब यही आनन्द-ब्रह्म-रूपिणी भगवती है। आनन्द-लहरी-रूपिणी इस भगवती में ही ब्रह्मादि सारा विश्व ओत-प्रोत होकर रहनेवाला इसका आनन्द-रूप है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप जिसके अन्तःकरण में प्रकाशित होती हो, उसे ऐसे स्वात्मानन्द की प्राप्ति होती है, जिसके आगे ब्रह्मादि देवों के आनन्द के पुञ्ज भी कण-वत् प्रतीत होते हैं और वह अमित परमानन्द में पर्याप्त प्रसन्न हो जाता है।

***

(३६६) श्रीपरा

पृ+अप्-पर अर्थात् परे, सबसे अच्छा, दूर की इत्यादि। न्याय में इस पद का अर्थ है-पदार्थों का सार। तन्त्र में, जैसा 'त्रिपुरा-सिद्धान्त' कहता है, इसका अर्थ है-प्रासाद-रूपिणी। श्रीपरानन्दनाथ की प्रसन्नता से इस भगवती को 'परा' कहते हैं। अस्तु, यहाँ अपद अर्थात् निष्पन्द या गति-रहित अनुपहित चेतना भी कह सकते हैं, जिसका व्यञ्जक 'चितिस्तत्पद-लक्ष्यार्था' संज्ञा है। इसी के पद-चतुष्टय शब्द-ब्रह्म-रूपी १. 'परा', २. 'पश्यन्ती', ३. 'मध्यमा' और ४. 'वैखरी'-रूप हैं। 'परा' का विशेषण प्रत्यक्-चिति है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप शब्द-मय ब्रह्म की मूल, वैखरी-मध्यमा और पश्यन्ती से भी परा उत्कृष्टा उच्च हो, इसलिए सभी आपको परा कहते हैं।

***

(३६७) श्रीप्रत्यक्-चिति

'प्रतिकूल स्वात्माभिमुखमञ्चतीति प्रतीची सा च साचिती च प्रत्यक् चिती अव्यक्त-संज्ञं ब्रह्म सैव रूपं यस्याः' अर्थात् प्रतिकूल (विपरीत) या अपनी ही दिशा में अर्थात् अन्तर्मुखी चित्तवाली। इसी को 'स्व-संवित्ति' कहते हैं। यह वाग्-ब्रह्म-रूपा सूक्ष्मा और अनपायिनी है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अव्यक्त ब्रह्म-तत्त्व को जानना चाहते हो, तो प्रत्यक् चिति-रूपिणी माता श्रीललिताम्बा को दिव्य अनुभव की दृष्टि से देखने का प्रयास करो।

***

(३६८) श्रीपश्यन्ती

देखनेवाली या द्रष्ट्री-स्वरूपा।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! वाणी के दूसरे पश्यन्ती-रूप में माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ और जिस प्रकार पश्यन्ती स्व आत्मा में सब कुछ अर्थात् अन्तःकरण व इन्द्रियों को देखती है, वैसे ही तुम समस्त विश्व के वृत्तान्त को जान लो।

***

(३६९) श्रीपर-देवता

उत्कृष्ट देवता। यह '**पश्यन्ती**' का विशेषण है। '**सौभाग्य-सुधोदय**' कहता है–

'**पश्यति सर्वं स्वात्मिनि करणानां शरणिमपि यदुत्तीर्णा, तेनेयं पश्यन्तीत्युत्तीर्णेत्यप्युदीर्यते माता।**'

उक्त अविभागा और सब तरह से संहृत-क्रमा है। इससे अर्थ का ज्ञान होता है। यह सूक्ष्मा और अनपायिनी है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! ब्रह्मा, विष्णु और महेश से भी अधिकाधिक करने, विरुद्ध करने, न करने या अधिक करने में आपका उत्कर्ष देखकर सम्पूर्ण भुवन में ऐसा कोई नहीं है, जो आपको जाने-अनजाने प्रणाम न करता हो। आप सर्वातिशायी उत्कर्षवाली पर-देवता हो।

***

(३७०) श्रीमध्यमा

मध्य में स्थिता। यह शब्द-ब्रह्म का तीसरा रूप है। यह '**पश्यन्ती**' और '**वैखरी**' दोनों के मध्य अवस्थावाला रूप है। यह '**पश्यन्ती**' के सदृश न केवल उत्तीर्णा है और न '**वैखरी**' के सदृश बहिर्गता है–

पश्यन्तीव न केवलमुत्तीर्णा नापि वैखरी बहिः।
स्फुटतर-निखिलावयवा वाग्-रूपा मध्यमा तयोरस्मात्।।

अर्थात् न केवल '**पश्यन्ती**' की तरह सूक्ष्मा है और न '**वैखरी**' की तरह बाहरी। प्रकाशमान सब अङ्गों से युक्त वाणी '**मध्यमा**' है। यह स्मरण-ग्राह्या अर्थात् स्मृति-गोचरा है। इसी को सङ्कल्प-रूपा, क्रम-रूपानुपातिनी अर्थात् शृङ्खला-बद्धा कहते हैं। यह प्राण-वृत्ति से अतिक्रमण करनेवाली अर्थात् बाहर होनेवाली है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! बुद्धि के साथ सहयोग करनेवाली बुद्धि की सहचरी मध्यमा, वाणी के तीसरे रूप में माता श्रीललिताम्बा को जानो और सफल अर्थवान् वाक्-शक्तिशाली हो जाओ।

***

(३७१) श्रीवैखरी-रूपा

'**विशेषेण खरः कठिनस्तस्येयं वैखरी सैव रूपं यस्याः।**'

अर्थात् **शब्द की घनावस्था** या कठिन अवस्था के रूप को '**वैखरी**' कहते हैं।

अथवा '**वै इति निश्चयेन खं आकाशं कर्ण-विवरं वा राति गच्छति**' (सौभाग्य-सुधोदय)। इस दूसरी व्युत्पत्ति के अनुसार जो शब्द कानों से सुनाई पड़े अथवा बाह्य आकाश में जिसका स्पन्दन हो, उसको '**वैखरी**' शब्द कहते हैं।

'**योग-शास्त्र**' की व्युत्पत्ति है–'**विखर वायुमुन्नोति**' अर्थात् यह शब्द की निष्पत्ति-स्वरूपा या वर्ण-विग्रहा (रूपा) है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप सर्वत्र विकास को प्राप्त, सभी लोक-व्यवहार की साधन चौथी वाणी वैखरी-रूपा हो। वि अर्थात् विशेष खर अर्थात् घन कठिन भाव को प्राप्त वैखरी-रूपा अथवा विखर अर्थात् प्राणों से प्रेरित वैखरी-रूपा हो। आपकी कृपा हम पर सदा बनी रहे।

***

(३७२) श्रीभक्त-मानस-हंसिका

भक्तों के मानस-सरोवर में रहनेवाली हंसी है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! समस्त प्रकार के भव्य कल्याण को देनेवाली, भक्ति-भाव से प्राप्त होनेवाली, भक्तों के मानस (मन) सरोवर की हंसी, समस्त भुवनों की ईश्वरी माता श्रीललिता को ध्याओ और भाग्यवान्-से-भाग्यवान् बन जाओ।

***

(३७३) श्रीकामेश्वर-प्राण-नाड़ी

शिव की प्राण-शक्ति। इससे यह बोध होता है कि शक्ति के बिना शक्तिमान् का आस्तित्व ही नहीं है। प्राण या शक्ति-रहित हो जाने से 'शिव'–शव हो जाता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप कामेश्वर पर-शिव की प्राण-नाड़ी हो। जो भक्त आपको ध्याते हैं, वे संसार के समस्त कष्टों के निवारण के लिए सिद्ध वैद्यराज के पास पहुँच जाते हैं।

***

(३७४) श्रीकृतज्ञा

'कृत' अर्थात् कर्म-सुकर्म और दुष्कर्म दोनों की 'ज्ञा' अर्थात् जाननेवाली। इससे सर्व-साक्षी होने का बोध होता है। अथवा 'कृतज्ञ' उसे कहते हैं, जो दूसरों के उपकारों का बदला उपकार से दे। अथवा अपने 'कृत' अर्थात् सृष्टि या विश्व का ज्ञान रखनेवाली है। इससे सर्व-व्यापकता का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप किए गए, किए जानेवाले और किए जाएँगे–इन तीनों प्रकार के कर्मों को जानती हो। अतएव आपका कृतज्ञा नाम सत्य है।

***

(३७५) श्रीकाम-पूजिता

'काम' अर्थात् मन्मथ की उपासिता। अथवा 'काम-पीठ' पर इसकी पूजा होने से यह नाम है। अथवा 'काम' से पर और अपर काम अर्थात् शुद्ध और अशुद्ध वासना-द्वय से तात्पर्य है, जिसके अनुसार ऐहिक और पारलौकिक दोनों कामनाओं की प्राप्ति हेतु 'पूजिता' या आराध्या है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! काम-देव ने अपने काम की पूर्ति के लिए आपको यथेष्ट स्तुति से प्रसन्न किया है। अतः काम-देव की ईश्वरी काम-पूजिता नाम से, भक्त-जन तीनों सन्ध्याओं में आपको पूजते और भजते हैं।

***

(३७६) श्रीशृङ्गार-रस-सम्पूर्णा

शृङ्गार रस से पूर्ण रूपवाली।' इसका अन्तस्तात्पर्य 'पूर्ण-गिरि' पीठ से है। अथवा 'शृङ्ग' द्वि-वाचक है, 'अर' कहते हैं–दल को। 'रस' से छः का बोध होता है। इस प्रकार 'शृङ्गार-रस का अर्थ है– द्वादश-दल पद्म। तन्त्र और योग-शास्त्र के अनुसार यही अनाहत चक्र में 'पूर्ण-गिरि-पीठ' है। इससे 'पूर्ण-गिरि-पीठ' वाली है, यह बोध होता है।

अथवा 'शृङ्गं प्रधान-भूतं अररं कपाटं आवरका विद्या यावत् यस्याः सा शृङ्गाररा। सम्पूर्णेन ब्रह्मणा सहिता स-सम्पूर्णा-शृङ्गारर-सम्पूर्णा' अर्थात् प्रधानतया अविद्या जिसका आवरक हो। इससे भगवती शवल ब्रह्म और शुद्ध ब्रह्म दोनों है, यह बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप जब तक शृङ्गार रस से पूर्ण होकर उदित नहीं होती, तब तक कवियों की वाणी मनोहारी नहीं होती। आप ही कवियों की कवित्व-शक्ति में सुधा-सी माधुरी देती हो।

***

(३७७) श्रीजया

जय-स्वरूपा। पद्म-पुराण के अनुसार इस नाम की भगवती वराह पर्वत पर हैं। अनात्माकार-वृत्तियों पर ही जय पाने से जीव की स्थिति जया-स्वरूपा होती है, न कि किसी तुच्छ वैरी पर जय पाने से।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप निश्चय ही प्रणाम करते भक्तों को जय प्रदान करती हो। आप जय-रूपिणी हो। आपके जया नाम का भजन कर भक्त-जन सभी स्थानों में जय प्राप्त करते हैं।

***

(३७८) श्रीजालन्धर-स्थिता

'जालन्धर' पीठ पर रहनेवाली। पञ्जाब में जालन्धर नगर है। अथवा इस नाम का स्थान जीव के शरीर में भी है। योग का 'जालन्धर-बन्ध' प्रसिद्ध है, जिसके द्वारा भगवती की स्थिति का ज्ञान होता है।

अथवा 'जालं धरति इति जालन्धरः' अर्थात् जाल को धारण करनेवाला। 'जाल' शब्द नपुंसक है और समूह-वाचक है। इस अर्थ के अनुसार समष्टि-धारक-स्वरूपा है। अथवा 'जाल' शब्द 'जल गोपने आवरणे वा+अण्' से बना है, जिससे गुप्ता वा आवृत-स्वरूपा का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपको जालन्धर-पीठ में विराजमान विष्णु-मुखी नाम से लोग स्मरण करते हैं। जो इस प्रकार आपका स्मरण करते हैं, उनके सभी अभीष्ट पूर्ण होते हैं।

***

(३७९) श्रीओड्याण-पीठ-निलया

'ओड्याण' पीठ पर जिसका स्थान है। 'ओड्याण' को 'उड्डीयान' भी कहते हैं, जो उड़ीसा में जगन्नाथपुरी में है। अथवा इस नाम का स्थान जीव के शरीर में भी है। ज्ञान-यज्ञ या परा-पूजा में उक्त चारों पीठों की भावना साधक अपने शरीर में करता है। योग-साधन में भी ऐसा ही है।

◆◆स्तुति◆◆

जिस ओड्याण-पीठ में निवास करनेवाली को स्मरण करते-करते, साधक अद्वैत ज्ञान-रूप अमृत को प्राप्त कर लेते हैं, उन संवित्-रूपिणी भगवती ललिताम्बा का मैं ध्यान करता हूँ, उन्हें प्रणाम करता हूँ।

***

(३८०) श्रीविन्दु-मण्डल-वासिनी

विन्दु-मण्डल में रहनेवाली। 'विन्दु' से पर-विन्दु से तात्पर्य है। यह सहस्त्रार के ब्रह्म-रन्ध्र में है। 'विन्दु-मण्डल' के अन्य नाम 'ब्रह्म-मण्डल' या 'ब्रह्म-पुरी' हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको विन्दु-मण्डल में अर्थात् सर्वानन्द-मय-चक्र में निवास करनेवाले स्वरूप में भजते हैं, उन पर काल की कलाएँ कुछ भी प्रभाव नहीं डालतीं। वे अजर और अमर होते हुए, सदा सर्व-तन्त्र सुख-दायक रस का आस्वादन करते हैं।

***

(३८१) श्रीरहो-याग-क्रमाराध्या

रहो-याग के क्रम से उपासिता। रहसि अर्थात् एकान्त, जहाँ कोई दूसरा न हो, वहाँ की साधना को 'रहो-याग' कहते हैं। यह ब्रह्म-रन्ध्र में ध्यान करने से होता है। पूज्य शङ्कराचार्य ने 'आनन्द-लहरी' में ऐसा ही बताया है–'सहस्त्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसे।'

एकान्त मनन और निदिध्यासन से भी तात्पर्य है। एकान्त साधन ही पूर्ण फल-दायक है–'योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः' (गीता)।

तन्त्र-शास्त्र भी कहता है–'एकान्त-शीलस्य दृढ-व्रतस्य मोक्षो भवति प्रीति-निवर्तकस्य।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अपने हृदय में चैतन्य वह्नि में, धर्म और अधर्म को होम करने का द्रव्य बनाकर हवन करो तथा इस रहस्य-याग-क्रम के द्वारा साध्य माता श्रीललिताम्बा का सान्निध्य प्राप्त करो।

***

(३८२) श्रीरहस्तर्पण-तर्पिता

रहस्तर्पण से सन्तुष्टा। 'रहस्तर्पण' से मन्त्र के सूक्ष्म अर्थ-मात्र से तात्पर्य नहीं है; पर अर्थात् वासनार्थ की भावना से है। विशेषार्घ्य-विन्दु से तर्पण का भी यही तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! रहस्य-याग-क्रम की भाँति गुरु-मुख से प्राप्त रहस्त-तर्पण से माता श्रीललिताम्बा को तृप्त करो और ऊँचे से ऊँचा ऐश्वर्य, सु-यश, सर्वोत्कृष्ट भोग, मोक्ष हेतु आत्म-बोध इत्यादि सब कुछ प्राप्त करो।

***

(३८३) श्रीसद्यः प्रसादिनी

शीघ्र प्रसन्न होनेवाली। यहाँ प्रश्न उठता है कि कैसे ? इसका उत्तर पूर्व-नाम से मिलता है कि 'रहस्तर्पण' से ही तुरन्त प्रसन्न होती हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! आशुतोष भगवान् शङ्कर सदा-शिव की कान्ता प्रिया माता श्रीललिताम्बा सद्यः प्रसादिनी अर्थात् तत्काल प्रसन्न होनेवाली हैं। अतः अपने अभीष्ट सिद्धि के लिए कल्प-वृक्ष के समान तुम उनका आश्रय लिए रहो।

***

(३८४) श्रीविश्व-साक्षिणी

विश्व (सभी छोटी-बड़ी वस्तुओं और उनके कर्मों) को देखनेवाली। साक्षात् अव्यवधान से—स्वरूपात्मक बोध से ऐसा अनुभव होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको विश्व की साक्षि-भूता अर्थात् बाहर-भीतर सर्वत्र आपको देखता है और आप भगवती सबको देख रही हैं, आप ही सब करती हैं, आप ही सब करवा रही हैं, मैं कुछ भी नहीं करता हूँ, इस दृष्टि से ध्यान करते हैं, वे शुभ या अज्ञात अशुभ कर्म करते हुए भी उनके बन्धनों में नहीं पड़ते।

***

(३८५) श्रीसाक्षि-वर्जिता

यह स्वयं देखनेवाली है, जिसे देखनेवाला कोई दूसरा नहीं है। इससे भगवती की निर्द्वन्द्वता सिद्ध होती है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! संसार के रहस्य को जानने के लिए उन माता श्रीललिताम्बा की आराधना करो, जो तीनों लोकों की साक्षिणी हैं, जो पर से परे अर्थात् जिनका कोई साक्षी नहीं है।

***

(३८६) श्रीषडङ्ग-देवता-युक्ता

छः अङ्ग-देवताओं से युक्ता अर्थात् आवृत्ता। इस प्रकाश-शक्ति के प्रथम आवरण में छः देवता हैं–१. हृदय, २. शिर, ३. शिखा, ४. नेत्र, ५. कवच और ६. अस्त्र।

उक्त छहों से क्रमशः १. सर्वज्ञता, २. तृप्ति, ३. अनादि - बोधत्व, ४. स्वतन्त्रता, ५. नित्यता और ६. अलुप्त-शक्तित्व का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपको जो भक्त षडङ्ग देवता–१. हृदय, २. शिर, ३. शिखा, ४. नेत्र, ५. कवच (बाहु), ६. अस्त्र से युक्त उपासना करते हैं व पूजते हैं, उन भक्तों को वेद-ज्ञान स्वयं ही प्राप्त हो जाता है। उनकी मति, स्मृति और वाणी में षडङ्ग वेद (१. शिक्षा, २. कल्प, ३. व्याकरण, ४. छन्द, ५. ज्योतिष, ६. निघण्टु) उपस्थित हो जाते हैं।

***

(३८७) श्रीषाड्गुण्य-परिपूरिता

छहों गुणों से परि-पूर्णा। ये छहों गुण–ऐश्वर्य हैं, जिनसे ईश्वरत्व है। इससे पूर्ण ईश्वर या पूर्ण ब्रह्म का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप षाड्गुण्यों (१. ऐश्वर्य, २. धर्म, ३. यश, ४. श्री, ५. ज्ञान, ६. वैराग्य अथवा १. उत्पत्ति, २. प्रलय, ३. आगमन, ४. गमन, ५. विद्या, ६. अविद्या) से परिपूर्ण हो। जो भक्त आपको इष्ट-देवता के रूप में पूजते हैं, वे भी उक्त षाड्गुण्यों से परिपूर्ण हो जाते हैं क्योंकि उपास्य देवता के गुण उपासक में आते ही हैं।

***

(३८८) श्रीनित्य-क्लिन्ना

दयार्द्रा अर्थात् दया से आर्द्रा। यह भगवती की तृतीया नित्या का नाम है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप सृष्टि का आदि कारण नित्या हो, अविनाशिनी हो और कारुण्य रस से भीगी हुई सराबोर हो। जो भक्त आपको इस रूप में पूजते हैं, वे जीवन्मुक्त होकर आपके समान सरस हो जाते हैं।

***

(३८९) श्रीनिरुपमा

जिसकी कोई उपमा नहीं। श्रुति भी कहती है–'न तस्य प्रतिमा अस्ति' अर्थात् उसकी कोई मूर्ति नहीं है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जहाँ से सभी भुवनों की उपमाएँ उदित होती हैं, जिसका कहीं भी कोई उपमान न तो है–न होगा, उन निरुपमा त्रिपुर-सुन्दरी माता श्रीललिताम्बा का आश्रय ग्रहण करो, जो भक्तों पर स्नेह करनेवाली हैं अथवा भक्त जिनके स्नेह के पात्र हैं।

***

(३९०) श्रीनिर्वाण-सुख-दायिनी

'निर्गतं वाणं शरीरं यस्मिंस्तद-शरीरं' अर्थात् शरीरों के अन्त होने पर अर्थात् स्थूल शरीर, लिङ्ग (सूक्ष्म) शरीर और कारण शरीर–इन तीनों के लय होने पर जो सुख होता है, उस सुख को देनेवाली। 'निर्वाण' कैवल्य मुक्ति है, जो मुक्तियों में सर्व-श्रेष्ठ है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! और लोग किन्हीं भी देव को सिद्धि प्रदान करनेवाला कहें, किन्तु तुम निश्चय-पूर्वक अम्बिका भगवती श्रीललिता को ही निर्वाण-सुख की देनेवाली कहो–समझो क्योंकि श्रीसप्तशती में स्पष्ट कहा गया है–'सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतु-भूता सनातनी।' अथवा 'त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति-हेतुः।'

***

(३९१) श्रीनित्या-षोडशिका-रूपा

सोलहों नित्या-स्वरूपा। ये सोलह नित्याएँ हैं–१. कामेश्वरी, २. भग-मालिनी, ३. नित्य-क्लिन्ना, ४. भेरुण्डा, ५. वह्नि-वासिनी, ६. महा-वज्रेश्वरी, ७. शिव-दूती, ८. त्वरिता, ९. कुल-सुन्दरी, १०. नित्या, ११. नील-पताका, १२. विजया, १३. सर्व-मङ्गला, १४. ज्वाला-मालिनी, १५. चित्रा और १६. श्रीत्रिपुर-सुन्दरी। इनका पूर्ण विधान 'तन्त्रराज-तन्त्र', 'नित्याषोडशिकार्णव' आदि में देखें।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! नित्या-षोडशिका आपकी एक आवरण देवी हैं। कामेश्वरी आदि आपकी सोलह आवरण देवियाँ अथवा अङ्ग-रश्मि-रूपा देवियाँ हैं। जो भक्त आपको नित्या षोडशिका रूप में आलोकन करते हैं, अथवा भक्ति से निहारते हैं, अथवा ध्यान में भाव-पूर्ण हो देखते हैं, वे सोलहों कलाओं की अनुभूति प्राप्त करते हुए सत्रहवीं कला को प्राप्त करते हैं।

***

(३९२) श्रीकण्ठार्ध-शरीरिणी

'श्रीकण्ठ' शिव को कहते हैं क्योंकि 'श्री' का एक अर्थ विष भी है, जो शिव के कण्ठ में है। इस प्रकार भगवती शिव की अर्द्धाङ्गिनी हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपने द्वैत के जाल को तोड़ने के लिए श्रीकण्ठ (शिव) को अर्द्धाङ्ग दिया है। दोनों मिलकर एक ब्रह्म हो। आपके इस मिथुन-स्वरूप को न मानने पर मुक्ति सम्भव ही नहीं। माया-प्रकृति को पुरुष ब्रह्म में मिलाए बिना अद्वैत सम्भव नहीं। अतः द्वैत के जाल को तोड़ने के लिए आप श्रीकण्ठार्ध-शरीरिणी का आश्रय ग्रहण करना परम आवश्यक है।

***

(३९३) श्रीप्रभावती

प्रभा अर्थात् ज्योति या किरण। ज्योतिष्मती या किरणवती से अणिमादि आवरण-देवताओं से तात्पर्य है। किरण गुण-वाचक भी है। इससे धर्मी शक्ति का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! विश्व को सभी प्रकार से वशीभूत करना चाहते हो, तो चित्त को एकाग्र करके विसतन्तु-सी पतली लाल-लाल प्रभावाली तथा पाश, अंकुश, वर और अभय से युक्त हाथोंवाली माता श्रीललिताम्बा का सदा ध्यान करो। अणिमा आदि उनकी आवरण देवियाँ हैं, उनको ध्याते ही वशीकरण की शक्ति प्राप्त होती है।

***

(३९४) श्रीप्रभा-रूपा

किरण-रूपा या गुण अर्थात् शक्ति-रूपा। इससे धर्म-शक्ति का बोध होता है।

उक्त दोनों नामों से स्पष्ट है कि भगवती स्वयं धर्मी शक्ति या गुण-मयी और धर्म-शक्ति या गुण-रूपा दोनों हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! प्रभा आदि आपकी आवरण देवियाँ हैं। इनमें आप प्रकाश-रूप से विराजित होती हो। ये आवरण-देवियाँ आपसे भिन्न नहीं हैं।

***

(३९५) श्रीप्रसिद्धा

'विख्यात' अर्थात् जिसे प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से सभी जानते हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

जो सभी लोकों में वेदनीया अर्थात् जानने योग्य हैं और जिसको सभी आत्म-रूप से जानते हैं, परम प्रसिद्ध सिद्धियाँ देनेवाली वे भगवती कामेश्वरी माता श्रीललिता मेरे हृदय में प्रकाशित होती रहें।

***

(३९६) श्रीपरमेश्वरी

सबसे बड़ी ईश्वरी अर्थात् स्वामिनी। इससे 'परम सत्ता' का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

जो परमेश्वरी परे-से-परे हैं और जो पुण्यवानों तथा परोपकारियों को सुख से प्राप्त होती हैं एवं जो भगवान् पुरारि का मूर्तिमान् पुण्य-पुञ्ज हैं, वे माता श्रीललिताम्बा मेरे सभी अभीष्ट अर्थों को पूर्ण करें।

***

(३९७) श्रीमूल-प्रकृति

'तन्त्र-शास्त्र' के मत से उक्त पद से 'चिदाकारा' का बोध होता है। आकाश या ब्रह्म ही प्रकृति है। 'श्रुति' भी कहती है कि–'आत्मनः आकाशः सम्भूतः।' आकाश से भूताकाश से नहीं, चिदाकाश से तात्पर्य है।

'सांख्य-दर्शन' के मत से अविकृति अर्थात् प्रकृति की उस अवस्था को जिसमें विकार नहीं आया है, 'मूल प्रकृति' कहते हैं। इसे उपहित चेतना भी कह सकते हैं। इससे वेद-माता 'सावित्री' (सरस्वती) का भी बोध होता है। इसी को लक्ष्य कर 'श्रुति' कहती है कि–'नासीदसन्नो सदासीत्' अर्थात् आदि में न असत् था और न सत् था। इस प्रकार अनिर्वचनीय ब्रह्म का बोध होता है।

अथवा मू-कार' से पाँचों तन्मात्राओं से और 'ल-कार' से अव्यक्त, महत् और अहङ्कार–इन तीनों से तात्पर्य है। इस प्रकार 'अष्ट-विध प्रकृति' का बोध होता है। 'समास-सूत्र' भी है–'अष्टौ प्रकृतयः।' 'गीता' भी आठ प्रकृतियों का उल्लेख करती है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! स्थूल-सूक्ष्म परमाणु से लेकर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड-रूप प्रपञ्च आप से ही उत्पन्न होता है, आप में रहता है तथा आपमें समा जाता है। आप ही सत्त्व, रजस् तथा तमस्–इन तीनों गुणों की जननी हो। आप ही मूल प्रकृति हो।

***

(३९८) श्रीअव्यक्ता

अ-प्रकटा। २४ वाँ तत्त्व, जो 'काम-कला' या 'अहं' के नाम से ज्ञात है और जिसमें सम्पूर्ण विश्व बीज-रूप में समाविष्ट है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपकी क्रिया न तो स्थूल आँखों से, न वाणी से, न मन से और न निदिध्यासन से ही प्रकाश में आ पाती है। सर्व-व्यापक होने से जगत् को अनेक प्रकार से आवर्तित-परिवर्तित करती हुई हे अव्यक्त-रूपिणी अम्ब! आपके गुणों का हम क्या वर्णन करें। जो अव्यक्त है, अप्रकट है, जिसके गुण भी अव्यक्त हैं, तो कोई क्या कहे?

***

(३९९) श्रीव्यक्ताव्यक्त-स्वरूपिणी

व्यक्त और अव्यक्त प्रकृति-स्वरूपा। यह 'व्यक्ताव्यक्त'-पद क्षराक्षर-पद का वाचक है। इससे समष्टि और व्यष्टि के संयुक्त रूप का भी बोध होता है। अथवा इससे सदसदात्मक या चिदचिदात्मक ब्रह्म अर्थात् 'उभय-परिणामिनी सत्ता' से तात्पर्य है। यह पद त्रि-विध लिङ्ग-रूप का भी द्योतक है। ये तीनों रूप हैं–१. अव्यक्त, २. व्यक्त और ३. व्यक्ताव्यक्त। इन तीनों को १. अपरिणमिनी, २. सम-परिणामिनी और ३. विषमपरिणामिनी–'नित्या सत्ता' कहते हैं। व्यक्त और अव्यक्त का स्पष्टीकरण भगवान् श्रीकृष्ण ने 'गीता' के ८ वें अध्याय में किया है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! एक दृष्टि से आप व्यक्त और दूसरी दृष्टि से अव्यक्त, इस प्रकार दोनों रूपवाली हो क्योंकि २३ तत्त्वों को व्यक्त कहा गया है और अव्यक्त से परा प्रकृति बतलाई गई है। दोनों ही आपके रूप हैं। अतएव आप अनिर्वाच्यता की महा-भूमि हो। आपके गुणों के सम्बन्ध में हमारी जो कल्पना है, वह आपको प्राप्त होकर सत्य और सफलता को प्राप्त हो, यही प्रार्थना है।

***

(४००) श्रीव्यापिनी

इस नाम से 'विश्व-व्यापिनी' से तात्पर्य है। भगवती के अहङ्कार-त्रय के कार्य-परिणाम होने से ऐसा बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको विश्व में व्याप्त रहनेवाले स्वरूप में भजते-ध्याते हैं, वे अपने अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त और अहङ्कार) को आप में ही व्याप्त कर लेते हैं और इस कारण जहाँ-जहाँ उनकी दृष्टि जाती है, वहाँ-वहाँ उन्हें आपका रूप ही प्रकाशित हुआ दिखता है।

***

(४०१) श्रीविविधाकारा

अनेक प्रकार के रूपवाली। 'एकोऽहं बहु स्याम' इस उक्ति को यह संज्ञा चरितार्थ करती है। है तो वास्तव में वह एक, परन्तु लीला के निमित्त इसकी भिन्न-भिन्न अनेक आकृतियाँ हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे काम-देव को जीतनेवाले शिव की प्रिये, सदा मङ्गल-रूपिणी माता श्रीललिताम्बा! देव-देवियों के संहार के लिए और धर्म के उद्धार के लिए, प्राकृतिक-वैकृतिक और कौमारादि बहुत से आकारों को धारण करती हुई अर्थात् आप ही विविधाकारा नाना प्रकार आकार की हो।

***

(४०२) श्रीविद्याऽविद्या-स्वरूपिणी

'विद्या' और 'अविद्या' दोनों स्वरूपवाली। विद्या से 'ज्ञान' का और अविद्या से 'भ्रान्ति' का तात्पर्य है। विद्या–मुक्ति की देनेवाली और अविद्या–बन्धन की करनेवाली है। दोनों ही भगवती हैं। 'श्रुति' कहती है कि–'विद्याहमविद्याहम्।' इससे यह बोध होता है कि जो कुछ अच्छा और बुरा है, वह भगवती के अतिरिक्त नहीं है। इसी से ब्रह्मा-कृत 'रात्रि-सूक्त' नामक देवी के स्तवन में कहा है कि–'यच्च किञ्चिद् वस्तु सदसद्वाऽखिलात्मिके! तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं....।'

इस पद से तीन रूपों का भी बोध होता है अर्थात्–१. विद्या, २. अविद्या और ३. स्वः अर्थात् आत्मा या शिव (शुद्ध-शिव-तत्त्वात्मक) रूप। 'स्वः-शब्द'–'पर-ब्रह्म' का वाचक है। 'स्वः' से आत्मा और परमात्मा दोनों का बोध होता है। 'लिङ्ग-पुराण' में ऐसी व्याख्या स्पष्ट शब्दों में दी है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप तत्त्व-ज्ञानियों तथा कुशल विद्वानों, साधकों एवं पुण्यवानों को मोक्ष प्रदान करने के लिए और दुष्कर्मकारी दुष्टों व अज्ञानियों के बन्ध के लिए, विद्या और अविद्या–दोनों ही रूप धारण करती हुई विजय पा रही हो।

***

(४०३) श्रीमहा-कामेश-नयन-कुमुदाह्लाद-कौमुदी

'महा-कामेश' अर्थात् सबसे बड़ी इच्छा रखनेवालों के स्वामी अर्थात् परम शिव के 'नयन-कुमुद' अर्थात् लाल कमल रूपी नयनों को आनन्दित करनेवाली 'कौमुदी' अर्थात् 'चन्द्रिका' या ज्योत्स्ना-रूपिणी। इससे परम तत्त्व-ज्ञान की देनेवाली है, यह बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अपने भीतरी अन्धकार को दूर करने के लिए निरन्तर महा-कामेश पर-शिव के नेत्र-रूप कुमुद को आनन्द पहुँचानेवाली, चाँदनी-स्वरूपा माता श्रीललिताम्बा को पूजते-भजते रहो।

***

(४०४) श्रीभक्त-हार्द-तमो-भेद-भानु-मद्-भानु-सन्तति

'भक्त' से तात्पर्य है निम्न श्रेणी के भक्तों से क्योंकि उच्च श्रेणी के भक्तों के हृदय में 'तम' अर्थात् अन्धकार नहीं रहता है। ऐसे भक्तों के हृदय के अन्धकार का नाश करनेवाले सूर्य अर्थात् ज्योति की किरण-स्वरूपा भगवती हैं। 'भानु-सन्ततिः' का अर्थ है किरण-समूह। हृदय के तम से अविद्या-रूपी आवरण से तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो आपको भक्तों के मानस तम को भेदन करनेवाली किरणवान् सूर्य की किरण-सी ध्याते हैं, उनमें पर-तत्त्व स्वयं प्रकाशित हो जाता है।

***

(४०५) श्रीशिव-दूती

'शिव एव दूतो यस्याः सा' अर्थात् शिव ही जिसके दूत हों, वह। 'सप्तशती' में इसकी कथा है। शिव की दूती अर्थात् सन्देश कहनेवाली। पूर्व व्युत्पत्ति के अनुसार शिव को दूत बनानेवाली से काल की प्रेरिका 'आद्या शक्ति' का बोध होता है और दूसरी व्युत्पत्ति के अनुसार परम शिव की दूती होने से परम शिव अर्थात् पर-ब्रह्म की पहचान करानेवाली 'ब्रह्म-विद्या' से तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! शुम्भ और निशुम्भ दानवों से संग्राम प्रारम्भ होने पर स्वयं भगवान् शङ्कर आपके दूत बने थे। आप पुष्कर (कमल) पर बैठी हुई, पुष्कर तीर्थ में विराजती हो। आप मुझे कल्याण प्रदान करें।

***

(४०६) श्रीशिवाराध्या

शिव की अथवा शिव से उपासिता। यहाँ 'शिव' से परम शिव से नहीं, अपर-शिव से तात्पर्य है। अथवा 'चतुष्कूट-विद्या-स्वरूपा' है, जिसकी आराधना स्वयं शङ्कर ने की है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सर्व-सिद्धीश्वर भगवान् शिव जिसकी आराधना कर अर्द्ध-नारीश्वर हो गए, उन भगवती श्रीललिताम्बा का आश्रय ग्रहण करो और विश्व के आदि में रहनेवाली स्वयं शिव की आराधनीया की कृपा के पात्र बनो।

***

(४०७) श्रीशिव-मूर्ति

शिव-स्वरूपा। इससे शक्ति और शक्तिमान् दोनों के अभेद का बोध होता है। 'श्रुति' कहती है कि–'शक्ति-शक्ति-मतोरभेदः।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जो दृष्टि से देखने, मन से स्मरण करने, वाणी से स्तुति करने और सिर से प्रणाम करने पर सदा शिव-स्वरूप प्रतीत होती हैं, उन पराम्बा माता श्रीललिताम्बा की सदा स्तुति करो। वे शिव देनेवाली, कल्याण करनेवाली मूर्ति हैं।

***

(४०८) श्रीशिवङ्करी

शिव अर्थात् कल्याण करनेवाली। 'शिव' का दूसरा अर्थ मोक्ष है। इस प्रकार मोक्ष को देनेवाली–मुक्त करानेवाली हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जिसका स्वभाव जगत् के जनों का कल्याण करने का है, अथवा जिसका स्वभाव जीवों को शिव बनाना है और जो करुणा-रस की सागर हैं, उन शिवङ्करी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ और अपना सभी प्रकार से कल्याण करते हुए शिवत्व को प्राप्त करो।

***

(४०९) श्रीशिव-प्रिया

शिव की प्रिया अथवा शिव जिसका प्रिय है, वह। 'शिव' त्रि-वेदों में से महा-देव का नाम है और 'शिव' से मुक्तात्मा का भी बोध होता है। 'शिव' का विपरीत भाव-बोधक जीव है, जो पशु-पाश के बन्धन में जकड़ा (बद्ध) है। इस प्रकार जीव की प्रिया यह नहीं हो सकतीं अथवा इनका प्रिय या इनके पसन्द की वस्तु जीव अर्थात् अज्ञान से अन्धा पशु-तुल्य नहीं हो सकता।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जिसे अर्चन आदि से शिव प्रसन्न करते हैं और जो इष्ट के प्रदान आदि से शङ्कर को प्रसन्न करती हैं, उन माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ–पूजो और वशिन्यादि वाग्-देवता की भाँति माता श्रीललिताम्बा एवं पर-शिव की पारस्परिक दिव्य प्रीति की अनुभूति को प्राप्त करो।

***

(४१०) श्रीशिव-परा

'शिवात् परा' अर्थात् शिव से परा या बड़ी। अथवा 'शिवः परो यस्याः सा' अर्थात् शिव जिससे श्रेष्ठ या बड़ा है, वह। अथवा 'शिव-प्रतिपादकत्वात् शिव-परा' अर्थात् शिव द्वारा प्रति-पादिता। शाक्त-वाद के अनुसार पहली और तीसरी व्याख्याएँ युक्त हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप भक्तों के हृदय में शिव से पूर्व भावित होती हो और शिव से सदा ही उत्कर्ष, समृद्धि, वृद्धि का रूप धारण करती हो। आप भक्त-जनों के मङ्गल करने में परायण हो। भक्तों को शिवत्व का लाभ आप के ही अधीन है।

***

(४११) श्रीशिष्टेष्टा

'शिष्ट' अर्थात् अच्छे या अचञ्चल मनवालों (स्थिर चित्तवालों) की 'इष्टा' अर्थात् पूज्या या आराध्या।

वशिष्ठ-सूत्र में 'शिष्ट' के लक्षण बताए गए हैं–'न पाणि-पाद चपलो न नेत्र-चपलो भवेत्, न च वागङ्ग-चपल इति शिष्टस्य गोचरः' अर्थात् हाथ-पैर का चञ्चल न हो, न नयनों का ही चञ्चल हो यही शिष्ट का लक्षण है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सदाचारी, वेदादि से अनुशासित भक्त जिसको प्रिय हैं, उन माता श्रीललिताम्बा का भजन-पूजन करो और स्वयं शिष्ट आचरणवाले, वेदादि शास्त्र विहित कर्मों को करनेवाले बन जाओ।

***

(४१२) श्रीशिष्ट-पूजिता

शिष्टों द्वारा पूजा की गई। इष्ट का अर्थ है इच्छिता–'इषु इच्छायाम्'।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप शिष्ट सदाचारी भक्तों से पूजिता हो। जो आपको इस स्वरूप में स्मरण करता है, वह भी ऊँचे-से-ऊँचा कल्याण प्राप्त करता है।

***

(४१३) श्रीअप्रमेया

जिसकी तुलना नहीं हो सकती।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! शक्ति क्या है? कौन है और वह कैसी है? कितने प्रभाववाली है? और कितनी है? इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिए विद्वानों द्वारा आप अप्रमेया कही जाती हो। ब्रह्मा, विष्णु और शिव–तीनों आपसे ही हैं। अतएव आप प्रमाण के योग्य नहीं हो।

***

(४१४) श्रीस्व-प्रकाशा

स्वयं प्रकाश-शक्ति, जो सूर्य, चन्द्र और अग्नि को प्रकाश देती है। इससे श्रुति में कथित परं-ज्योति का बोध होता है। परं-ज्योति वही है, जिसके प्रकाश से सारा विश्व आलोकित है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जिस प्रकार ब्रह्म-ज्ञानी का ब्रह्म-भाव अर्थात् ब्रह्म हो जाना निश्चित है, ठीक उसी प्रकार स्व-प्रकाशा माता श्रीललिताम्बा को भजने-पूजनेवालों का स्व-प्रकाश हो जाना निश्चित है। अतः तुम सदा उनको भजते-पूजते रहो।

***

(४१५) श्रीमनो-वाचामगोचरा

मन और वचन के परे अर्थात् न मन में समा सकती है और न कही ही जा सकती है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! विद्वान्, कवि तथा पण्डित लोग मन और वाणी से लक्ष्य न होनेवाली आपकी स्तुति करने में कैसे समर्थ हो सकते हैं? आप मन और वाणी का विषय ही नहीं हो, तो वे क्या वर्णन करें? आपका वास्तविक वर्णन कोई कर ही नहीं सकता।

***

(४१६) श्रीचिच्छक्ति

शक्ति के दो रूप हैं–१. चित् और २. माया। चित् से पूर्ण चेतना का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! आत्मा-रूप चिच्छक्ति-स्वरूपा माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-पूजो और अपनी आत्मा को अधिक-से-अधिक जान लो।

***

(४१७) श्रीचेतना-रूपा

यह चित्-शक्ति का विशेषण है। '**चेतना**' व ब्रह्म (धर्मी शक्ति) का प्रथम **विद्या-अक्षर** आदि-रूप है। चेतना-रहित वस्तु या पदार्थ को जड़ कहते हैं। चेतना यद्यपि सभी छोटे-से-छोटे पदार्थों में है क्योंकि इसके बिना किसी भी वस्तु की स्थिति नहीं रह सकती, तथापि इसकी मात्रा के अनुसार हम बाह्य दृष्टि से चेतना-व्यापार के अनुसार किसी पदार्थ को चैतन्य कहते हैं और जिसमें चेतना-व्यापार दिखाई नहीं देता, उसे जड़ कहते हैं। जड़ पदार्थ में भी चैतन्य है, परन्तु सुप्त (सोया) होने से लक्षित नहीं होता। पाश्चात्य विज्ञान को अभी तक पता नहीं है कि विश्व में कोई भी ऐसा जड़ पदार्थ नहीं है, जिसमें स्पन्दन अर्थात् गति न हो और जिसका रूप बदलता न हो अर्थात् जो बनता और बिगड़ता न हो। **'मोलार मॉस'** की उत्पत्ति और विनाश अनवरत होता ही है। इससे सिद्ध है कि जड़ पदार्थ हैं ही नहीं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! कीटाणु से ब्रह्म-पर्यन्त सभी पदार्थ जिससे प्रकाशित होते हैं, वही चेतना आप हो। हे चेतना-रूपा त्रिपुरे अम्बिके प्रसन्न होइए।

***

(४१८) श्रीजड़-शक्ति

बाहरी गति से रहित। 'जड़'–अविद्या या क्षर का द्योतक है। ब्रह्म का यह अपर (दूसरा) रूप है। अक्षर और क्षर दोनों अर्थात् विद्या और अविद्या के संयुक्त होने से ब्रह्म के पूर्ण रूप का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जड़-रूप वृक्षों, लताओं और पत्थरों आदि तथा रजत, सुवर्ण, सीस आदि धातुओं में आप ही प्रकाशमान हो। जड़ों में जो प्रकाश, गुरुत्व, लघुत्व, गौरत्व, कृष्णत्व, हरित्व, पीतत्व, रक्तत्व आदि शक्ति की प्रभा है, वह सब आप ही हो।

***

(४१९) श्रीजड़ात्मिका

अचेता। वह सारी सृष्टि, जो भगवती को जानने की शक्ति से रहित है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! दिखाई देनेवाले प्रपञ्च-रूप जड़ में आपकी माया आत्म-रूप से प्रकाशित हो रही है। सम्पूर्ण जड़ दृश्य जगत् आपका ही आत्म-स्वरूप है।

***

(४२०) श्रीगायत्री

'**गायन्तं त्रायते यस्मात्, गायत्री तेन कथ्यते**' (गायत्री-कल्प-भारद्वाज) अर्थात् जिसका गान करने से त्राण अर्थात् रक्षा हो, वही गायत्री है।

अथवा '**गायनाद् गमनाद् वापि गायत्री**' (देवी-भागवत) अर्थात् गान और गमन अर्थात् ज्ञान से 'गायत्री' संज्ञा है।

अथवा 'गायति च त्रायते' (छान्दोग्योपनिषद्)। इससे सर्व-व्यापिनी वाक्-शक्ति का बोध होता है, जिससे श्रुति कहती है कि 'गायत्री वा इदं सर्वं' (छान्दोग्य०)। इससे शब्द-ब्रह्म का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जिस प्रकार छन्दों में सर्व-प्रथम गायत्री है, उसी प्रकार देवताओं में आप प्रथमा अग्रगण्या हो। आप द्विजों के द्वारा सर्व-प्रथम प्राप्य एवं साध्य-रूप मानने-पूजने-जपने योग्य हो।

***

(४२१) श्रीव्याहृति

उच्चारण-रूपा। 'व्याहृति' मन्त्र भी है। इससे मन्त्र-रूपा है, ऐसा भी बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जिस प्रकार मन्त्रों के पूर्व 'भूर्भुवः स्वः' ये तीन व्याहृतियाँ लगाने से वे ऊँचे-से-ऊँचा कार्य सिद्ध करने में समर्थ होते हैं, ठीक उसी प्रकार जो भक्त आपके मन्त्रों को आदि में ध्याते हैं-जपते हैं, वे संसार में आदर्श व्यवहार तथा नाम-यशवाले हो जाते हैं।

***

(४२२) श्रीसन्ध्या

दो समयों की सन्धि की अवस्था, यथा-प्रातः-सन्ध्या अर्थात् रात्रि का अवसान और दिन का प्रारम्भ। इन दोनों की सन्धि अर्थात् मेल की अवस्था। इससे सृष्टि-कालिक प्रथमावस्था का भी बोध होता है। यथा- सम+ध्या=सन्ध्या' की व्युत्पत्ति है-'सम इति सम्यग् ध्यायन्त्यस्यां इति सन्ध्या' अर्थात् सम्यक् प्रकार से जिसमें ध्यान हो। इससे अवच्छिन्न चैतन्य की अभेद-भावना होती है।

'महा-भारत' में है-'सन्ध्येति सूर्यगं ब्रह्म - सन्ध्या - नाद - विभागतः। ब्रह्माद्यैः सकलैर्भूतैस्तदंशैः सच्चिदात्मनः। तस्य दासोऽहमस्मीति सोऽहमस्मीति या मतिः। भवेदुपासकस्येति ह्येवं वेद-विदो विदुः।'

सन्ध्या चार हैं-१. प्रातः-सन्ध्या, २. मध्याह्न-सन्ध्या, ३. सायं - सन्ध्या और ४. तुरीय-सन्ध्या अर्थात् महा-निशीथ-कालिक सन्ध्या।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप सन्ध्या अर्थात् काल (समय) रूपा हो, अथवा सन्ध्या अर्थात् भास्वर-चैतन्य प्रकाश-रूपा हो, अथवा सम्यक् ध्यान किया जाए जिसका वह सन्ध्या हो। अनेक प्रकार से आपके सन्ध्या नाम का अर्थ सुगम होता है।

***

(४२३) श्रीद्विज-वृन्द-निषेविता

'द्विज' अर्थात् दुबारा जिनका जन्म होता है अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य से **'निषेविता'** अर्थात् आराधिता। यह **'सन्ध्या'** का विशेषण है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! वसिष्ठादि महर्षि, नारदादि देवर्षि, प्रमुख द्विज-वृन्दों से सेवित करुणा की सागर श्रीकामेशी ललिताम्बा को भजो और कामनाओं की ईश्वरी के कृपा-पात्र बनकर उनका सान्निध्य प्राप्त करो।

***

(४२४) श्रीतत्त्वासना

तत्त्व जिसका आसन या अधिष्ठान है। शाक्त-दर्शन के अनुसार यहाँ ३६ तत्त्वों से तात्पर्य है। इसे योग-पीठासन भी कहते हैं। अथवा तत्त्व से परम तत्त्व का बोध होता है। अथवा **'तत्त्वानि असति क्षपतीति तत्त्वासना'** अर्थात् तत्त्वों का विकास करनेवाली। यह अर्थ भी युक्त है क्योंकि यही तत्त्वों का विस्तार करती है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! शिवादि क्षिति-पर्यन्त छत्तीस तत्त्व आपके आसन-स्वरूप हैं। जो भक्त आपको इस प्रकार तत्त्वासना समझते हुए आपका ध्यान-भजन करते हैं, उनके मन में तत्त्वों का प्रकाश उदित हो जाता है और वे तत्त्वज्ञ बन जाते हैं।

***

(४२५) श्रीतत्, (४२६) श्रीत्वम्, (४२७) श्रीअयी

इन तीनों की सन्धि में **'तत्त्व-मयी'** नाम होता है, जिससे भगवती का विश्व-रूपत्व सिद्ध होता है। अथवा **'तत्+त्वम्+अयी'** से पर-ब्रह्म का बोध होता है। **'अयी'** के भी अनेक अर्थ हैं— १. **'अय पथ-गताः'**, २. **'विति'** धातु-पाठ के गति के अर्थ में **'अय्यै नमः'** ऐसा भी प्रयोग है, ३. **'अयः'** का अर्थ शुभावह विधि है। इस प्रकार **'अयी'** का अर्थ है शुभावह विधि-रूपा।

◆◆प्रार्थना◆◆

जिससे सत्त्व, रजस् और तमस्–इन तीनों गुणों का उदय होता है और जहाँ से भूम्यादि पाँचों तत्त्व प्रकट होते हैं, उन 'तत्' पराम्बिका पर-देवता माता श्रीललिताम्बा को मैं प्रणाम करता हूँ।

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको 'त्वम्' पद से भक्ति-पूर्वक प्रणाम करते हैं, उन्हें समाज के प्रभावशाली से प्रभावशाली लोग प्रणाम करते हैं।

जो संसार में 'अयी' इस कोमल आमन्त्रण पद से सभी लोगों के द्वारा आमन्त्रण करने के योग्य हैं या आमन्त्रित की जाती हैं, वे विश्व-माता श्रीललिताम्बा मेरे आमन्त्रण को भी स्वीकार करें।

***

(४२८) श्रीपञ्च-कोशान्तर-स्थिता

कोश पाँच हैं। इससे पञ्च-पञ्चिका-पूजन के पाँचों विशेष मन्त्रों का बोध होता है। इन पाँचों देवताओं के नाम 'ज्ञानार्णव' में दिए हैं–१. 'श्रीविद्या च, २. परं-ज्योतिः, ३. परा-निष्कल-शाम्भवी, ४. अजपा, ५. मातृका चेति पञ्च-कोशाः प्रकीर्तिताः।'

अथवा आत्मा के १. अन्न-मय, २. प्राण-मय, ३. मनो-मय, ४. विज्ञान-मय, ५. आनन्द-मय–ये पाँच कोश या शरीर हैं। इनमें वह रहती है। यह स्थिति अभेद-रूप से है।

'श्रुति' भी कहती है–'अन्योऽन्तर आत्माऽऽनन्द-मयः।'

अथवा ब्रह्म-पुच्छ के पाँच पुच्छों के मध्य में रहनेवाली का इससे बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको अन्न-मय, प्राण-मय, मनो-मय, विज्ञान-मय और आनन्द-मय कोषों के मध्य विराजमान की भावना से देखते हैं और ध्याते हैं, उनके उक्त पाँचों कोष अत्यन्त सुख-प्रद, प्रस्फुरित, सबल एवं पूर्ण होते हैं।

***

(४२९) श्रीनिःसीम-महिमा

जिसकी 'महिमा' अर्थात् श्रेष्ठता असीम है। भगवती हैं–'महतो महीयान्' अर्थात् बड़ी-से-बड़ी अर्थात् जिसकी बड़ाई की सीमा नहीं है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! मेरी बुद्धि परिमित अर्थात् थोड़ी है और आपके गुण अपरिमेय हैं, जिनका कोई मान नहीं है, न कोई मान कर सकता है अर्थात् अगणित-असंख्येय हैं। तब मैं आपकी स्तुति क्या और कैसे कर सकता हूँ? आप निःसीम महिमावाली हो। आपकी महिमा का पार कोई नहीं पा सकता।

***

(४३०) श्रीनित्य-यौवना

कभी बूढ़ी न होनेवाली अर्थात् जिसकी शक्ति का ह्रास कभी नहीं होता अर्थात् नित्य-युवती। इस महा-शक्ति का कभी किञ्चित् भी ह्रास नहीं होता। तात्पर्य यह है कि पूर्णता में कमी नहीं आती। 'पूर्णमदः पूर्णमिदं"'पूर्णमेवावशिष्यते'-इस श्रौत वचन से भी ऐसे ही तात्पर्य का समर्थन होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! बाला नित्य नवीन यौवनवती माता श्रीललिताम्बा का आसरा लो और सर्व-सामर्थ्य के सहित अक्षुण्ण तारुण्य की कलाओं को प्राप्त करो।

***

(४३१) श्रीमद-शालिनी

आनन्द-मयी। इससे परा-हन्ता का बोध होता है। 'मद' से तात्पर्य है—आनन्द से। इस प्रकार आनन्द-स्वरूपा है। 'श्रुति' भी आनन्द को ब्रह्म का प्रधान लक्षण मानती है। अथवा इससे पराहङ्कार-स्वरूपा अस्मिता का बोध होता है। 'द्वितीया का ममापरा' अर्थात् 'मेरे सिवा अन्य दूसरा कौन है' के भाव का भी यह द्योतक है।

◆◆स्तुति◆◆

शरणागतों का पालन करनेवाली, कोमल मालती (चमेली) की माला धारण करनेवाली, शत्रु-समुदाय को विनष्ट करनेवाली, हाथ में भयङ्कर तलवार रखनेवाली, केश-पाश में मँडराते भ्रमरोंवाली, प्रणत जनों को सम्भालनेवाली, विशुद्ध आनन्द-रूपी मदवाली माता श्रीललिताम्बा का मैं आश्रय करता हूँ।

***

(४३२) श्रीमदाघूर्णित-रक्ताक्षी

मद से चलायमान लाल नेत्रोंवाली। अपर-मद या मद्य से भी आँख लाल होकर चञ्चल होती है और पर-मद अर्थात् आध्यात्मिक आनन्द से भी आँख वैसी ही हो जाती है। यहाँ 'मद' से पर-आनन्द से तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

मद से घूर्णित लाल-लाल लोचनवाली, आसवों से तृप्त माता श्रीललिताम्बा हमें श्री एवं संवित् प्रदान करें।

***

(४३३) श्रीमद-पाटल-गण्ड-भू

'मद' से 'पाटल' अर्थात् श्वेत और रक्त कपोल-वाली। अथवा 'मद' कस्तूरी को भी कहते हैं। 'पाटल' नाम फूल का है। इस प्रकार मकराकृति कुण्डल से शोभायमान जिसका कपोल है, वह।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! लाल रङ्ग के वस्त्र पहनकर, लाल आसन पर लाल चन्दन से आलेपित जो भक्त, रात्रि में लाल-लाल उपचारों से, मद-पाटल रक्त-वर्ण गण्ड-स्थल-युक्त आपको ध्यान में लाकर पूजते हैं और आपके मन्त्र का जप करते हैं, वे अपने सभी अभीष्ट को पूरा करते हुए सबको वशीभूत कर लेते हैं।

***

(४३४) श्रीचन्दन-द्रव-दिग्धाङ्गा

घिसे मलयज (श्वेत) चन्दन से लिप्त अङ्गवाली। इससे यह बोध होता है कि भगवती के प्रथम आवरण-अङ्ग भी सुगन्धि से लिप्त हैं अर्थात् बाह्यावरण भी आनन्द-दायक है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त परा-भक्ति से सुवासिनियों को सफेद सुगन्धित चन्दन अर्पित कर आपका पूजन करते हैं, वे अपनी दृष्टि-मात्र से सभी प्रकार के ज्वरों को शान्त करने में समर्थ हो जाते हैं।

***

(४३५) श्रीचाम्पेय-कुसुम-प्रिया

चम्पा के फूल को पसन्द करनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको सभी अङ्गों में सुवर्ण सरीखी कान्तिवाली, सभी अङ्गों में पीले वसन पहने हुए, सुवर्ण-मयी गदा हाथ में लिए, शत्रु की जिह्वा खींचकर बाहर निकालने में लगी हुई, सुनहरे सिंहासन पर विराजमान, कोमल गन्ध से भरे चम्पा के पुष्पों को पसन्द करनेवाली के रूप में ध्याते हैं, वे अपने शत्रुओं को पूर्णतया स्तम्भित कर देते हैं।

***

(४३६) श्रीकुशला

पटु या प्रवीणा। अथवा 'कुशल' आरोग्य-वाचक भी है। प्रवीणा से तात्पर्य है विश्व के सञ्चालन में प्रवीणा से। आरोग्य-वाचक भाव में निर्विकारा से तात्पर्य है। अथवा 'कुश' नाम जल का है, उसे लेनेवाली 'कुशं जलं लाति आदत्ते।' अथवा 'कु' अर्थात् कुत्सित (तुच्छ) है 'शलः' अर्थात् चन्द्रमा, जिसके सामने अर्थात् सुन्दरता में चन्द्रमा को भी तुच्छ या न्यून करनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपकी जगत् के रचना की चातुरी और पालन की पटुता को देखकर सभी ब्रह्मादि कवीश्वरों ने आपका नाम कुशला रखा है। जो भक्त इस रूप में आपको ध्याते हैं, वे स्वयं भी सभी कार्यों में निपुण हो जाते हैं।

(४३७) श्रीकोमलाऽऽकारा

'कोमल' अर्थात् सुकुमार 'आकार' अर्थात् अवयवों (अङ्गों) वाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपके हाथ एक ओर कमल जैसे कोमल हैं, तो दूसरी ओर निशुम्भ-शुम्भ आदि दानवों के मर्दन के समय संग्राम में इन्द्र के वज्र से भी अधिक कठोर हैं। आपके कोमल हाथों की वरद छाया हमारे ऊपर सदा बनी रहे।

***

(४३८) श्रीकुरु-कुल्ला

इस नाम की देवी की पूजा श्री-चक्र में अहङ्कार और चित्त-प्राकारों के मध्य में होती है। इससे विमर्श-मय जलाशय की अधिष्ठात्री अर्थात् विर्मश का बोध होता है। इसकी व्याख्या 'भावनोपनिषद्' में द्रष्टव्य है। 'तन्त्र-राज' के २२ वें पटल में इसका निरूपण है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको श्री-चक्र में, विमर्श-मय कुंकुम के समान लाल प्रभावाली 'कुरु-कुल्ला' के रूप में ध्याते हैं, उन्हें श्री स्वयं वरण करती हैं।

***

(४३९) श्रीकुलेश्वरी

'कुल' की ईश्वरी या स्वामिनी। 'कुल' से तात्पर्य है–सजातीय मातृ, मान और मेय के समूह से। अथवा 'कुल'–शक्ति-वाचक है। इस प्रकार धर्म-शक्तियों की ईश्वरी धर्मी शक्ति है, ऐसा बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको कुल-क्रम से कौल-मार्गानुसार अथवा कुल-गत वंश-परम्परा से ध्याते, गाते और पूजते हैं, वे शीघ्र ही मन्त्र-सिद्धि को प्राप्त करते हैं।

***

(४४०) श्रीकुल-कुण्डालया

'कुल-कुण्ड' में रहनेवाली। अथवा 'कुल-कुण्ड' में सोनेवाली–'आ-सुप्ति 'आ' समन्ताल्लयः सुप्तिरिव यस्याः सा।' मूलाधार-चक्र की कर्णिका के मध्य में जो विन्दु है, उसे 'कुल-कुण्ड' कहते हैं। उसमें रहने और सोनेवाली कुण्डलिनी से तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको मूलाधार कमल की कर्णिका के बीच 'कुल-कुण्ड'-रूपी बिन्दु में विराजमान सूक्ष्म कुण्डलिनी-शक्ति के रूप में ध्याते हैं और 'सहस्त्रार' में आपको अमृत-पान करते हुए देखते हैं, वे परम सिद्ध होकर जीवन्मुक्त हो जाते हैं।

***

(४४१) श्रीकौल-मार्ग-तत्पर-सेविता

अपनी वंश-परम्परा के मार्ग को कुल-मार्ग या 'कौल-मार्ग' कहते हैं। 'यस्य यस्य हि या देवी कुल-मार्गेण संस्थिता, तेन तेन च सा पूज्या बाल-गन्धानुलेपनैः।' अथवा समयाचार को 'कौल-मार्ग' कहते हैं। 'कौल-मार्ग' सर्व-श्रेष्ठ मार्ग है–'कौलात् पर-तरं नहि।' इस मार्ग में जो तत्पर हैं अर्थात् इस मार्ग के सच्चे पथिक हैं, उनसे सेविता अर्थात् आराधिता।

कौल या वामाचार के सिद्धान्तों को जो हृदयङ्गम नहीं कर पाते, वे ही भ्रम-वश उसे निन्दनीय समझते हैं। इस सम्बन्ध में 'वाम-मार्ग' नामक पुस्तक पठनीय है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जब कौल-मार्ग-परायण भक्त साधक आप करुणा-रस-धारिणी, दया-मयी, पञ्च-ब्रह्म-पीठ पर विराजित, कदम्ब-पुष्पों की माला पहननेवाली तथा हाथों में पाश, अंकुश, वर, अभय धारण करनेवाली को पञ्च-तत्त्वों एवं राजसी उपचारों से पूजते हैं, तो वे शुद्ध तत्त्व-ज्ञान के सहित श्री (लक्ष्मी) को भी प्राप्त करते हैं।

***

(४४२) श्रीकुमार-गणनाथाम्बा

'कुमार' अर्थात् स्कन्द और 'गणनाथ' अर्थात् गणेश–इन दोनों की माता। अथवा कु='मार-गण+नाथ+अम्बा' इस प्रकार 'कु' से कुत्सित, 'मार-गण' से स्मर-विकार-समूह के नाथ की अम्बा अर्थात् बाँधनेवाली। 'अवि' धातु का अर्थ, जिससे 'अम्बा'-शब्द बना है, बन्धन भी है– 'अवि-बन्धने।' 'कुमार' अहङ्कार-वाचक-पद भी है–

पुरुषो विष्णुरित्युक्तः, शिवो वा नाम-नामतः।
अव्यक्तं तु उमा-देवी, श्रीर्वा पद्म - निभेक्षणा।
तत्संयोगादहङ्कारः, स च सेना - पतिर्गुहः।।

इस प्रकार अहङ्कार-समूह के नाथ अर्थात् स्वामी को बाँधनेवाली अर्थात् सीमित करनेवाली से बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जब पुत्र-सुख से रहित दम्पत्ति पवित्र भावनाओं से पूरित होकर आपको कुमार (स्कन्द) एवं गणनाथ (गणेश) की अम्बा के रूप में पूजते हैं, तो आपकी प्रभावशालिनी कृपा-दृष्टि से वे शीघ्र ही पुत्रवान् होते हैं।

***

(४४३-४७) तुष्टि, पुष्टि, मति, धृति, शान्ति

उक्त भगवती के पाँच विशेष नाम हैं, जिनका उल्लेख सप्तशती में भी है। इन्हीं नामों के शक्ति-क्षेत्र भी हैं, जिनकी ये अधिष्ठातृ देवता हैं–'तुष्टिर्वस्त्रेश्वरे तथा देवदारु-वने पुष्टिः····धृतिः पिण्डारके क्षेत्रे' इत्यादि (पद्म-पुराण)। ये अन्तःकरण की आत्माकार-वृत्तियाँ हैं, जिनसे आत्मा या जीव-भाव दूर होता है और शिव-भाव अर्थात् 'सोऽहं'-भाव आता है।

'शान्ति' से षोडशी कला का भी बोध होता है।

◆◆प्रार्थना, स्तुति◆◆

हे मन! उन 'तुष्टि'-नाम्ना माता श्रीललिताम्बा का सदैव स्मरण करो, जिनके तनिक से भी उदय से सारे लोभादि दोष शान्त हो जाते हैं।

हे माता श्रीललिताम्बा! आप 'पुष्टि'-रूप से देवों, दानवों और मानवों द्वारा पूजी गई हो। दारु-वन में आपकी मूर्ति है। 'पुष्टि'-रूपिणी आप श्रीललिता पराम्बा को हम भजते-ध्याते-पूजते हैं।

हे मन! जिसके द्वारा तुम्हारे में मनन करने की शक्ति होती है, उन 'मति'-रूपिणी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-पूजो और उच्च-से-उच्च प्रकार से मनन करते हुए मोक्ष को प्राप्त करो।

हे माता श्रीललिताम्बा! आप अपनी जिस शक्ति से समस्त पृथिव्यादि भूतों को धारण करती हो, उसके अभेद-तत्त्व-सम्बन्ध से आप ही वह 'धृति' सिद्ध होती हो।

हे माता श्रीललिताम्बा! आपके द्वारा सभी का कल्याण होता है। माया के विकारों से सभी आपके द्वारा ही बच पाते हैं। अतः आप ही 'शान्ति' नामवाली हो।

***

(४४८) श्रीस्वस्ति-मती

सुन्दर सत्तावाली–'सुष्टु अस्तिः सत्तामती।' सुन्दर से यहाँ पारमार्थिकत्व से तात्पर्य है। इससे नित्या सत्ता का बोध होता है–'स्वस्तीत्यविनाशिनाम्।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको स्वस्ति, कल्याण, मङ्गल तथा पुण्य-प्रदायिनी मूर्ति के रूप में हृदय में धारण करता है, वह अपनी स्वस्ति-मती दृष्टि से यथेष्ट लोकोपकार करने में समर्थ होता है।

***

(४४९) श्रीकान्ति

'कथनं काम्यते वा कान्तिः' का साधारण अर्थ है–शोभा, द्युति, छवि। रहस्य-भाव में इससे इच्छा-शक्ति का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको विश्व का प्रकाशन करनेवाली एवं सभी काम्य भावों के एक-मात्र आश्रय के रूप में ध्याते हैं, वे देवाङ्गनाओं से भी अधिक कान्तिवाले हो जाते हैं।

***

(४५०) श्रीनन्दिनी

'नन्द + इनि' आनन्दित करनेवाली अर्थात् मुक्ति देनेवाली। इसी तात्पर्य से काम-धेनु की बछिया का नाम नन्दिनी है। गङ्गा को भी नन्दिनी कहते हैं क्योंकि इस पुण्य-वाहिनी में अवगाहन करने से चित्त प्रफुल्लित हो जाता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको दया की वर्षा करनेवाली, आनन्द देनेवाली के रूप में ध्याते और पूजते हैं, लोक में वे विद्वान् समृद्धिशाली होते हैं।

***

(४५१) श्रीविघ्न-नाशिनी

'विशेषेणघ्नतीति विघ्नः' अर्थात् विशेष रूप से बाधा करनेवाला। इससे अविद्या से तात्पर्य है। अतः अविद्या को दूर करनेवाली महा-विद्या ही 'विघ्न-नाशिनी' है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त गुण-गणों से उज्ज्वल आपके विघ्न-नाशिनी अथवा सङ्कट-नाशिनी-स्वरूप का कीर्तन करते हैं, वे जिस भी दिशा में जाते हैं, उनकी सभी विघ्न-बाधाएँ भूमि के अन्दर दब जाती हैं।

***

(४५२) श्रीतेजोवती

तेज-स्वरूपा। 'तेज' ज्योति को कहते हैं और सामर्थ्य को भी। इससे प्रकाश-शक्ति का बोध है, जिसकी ज्योति या तेज बाहरी और भीतरी दोनों है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त सूर्य, चन्द्र, अग्नि, नक्षत्रादि सभी ज्योतियों को देखता हुआ आपकी अविनाशी तेजोवती मूर्ति को ध्याता है, उसे शीघ्र तेजोवती सिद्धि की प्राप्ति होती है। वह तेजस्तत्त्व पर विशेष अधिकार कर, सूर्य-चन्द्रादि नक्षत्रों की गति-स्थिति के द्वारा, संसार की विशेष दशाएँ जानता है व बतलाने लगता है।

***

(४५३) श्रीत्रि-नयना

तीन नेत्रवाली। तीनों नेत्र–सूर्य, चन्द्र, अग्नि के प्रकाश और मण्डल के द्योतक हैं। अथवा 'नयति प्रापयति प्रमाणमिति' के अनुसार 'नयन' प्रमाण-वाचक शब्द है। इस भाव में तीन प्रमाणवाली अर्थात् तीन प्रमाणों से प्रमाणित है। १. प्रत्यक्ष, २. अनुमान अर्थात् युक्ति और ३. शब्द–ये ही तीन प्रकार के प्रमाण हैं (मनु)। 'त्रिविधं प्रमाणं' और 'प्रत्यक्षानुमानागमः प्रमाणानि' के अनुसार सांख्य और योग-दर्शन का भी यही मत है। इन्हीं तीनों को वेदान्त में १. श्रवण अर्थात् शब्द-ज्ञान, २. मनन अर्थात् युक्ति या तर्क और ३. निदिध्यासन अर्थात् प्रत्यक्ष या स्वानुभव-रूप कहा है।

अथवा तीन मार्गों पर ले जानेवाली–'त्रीन् मार्गान् प्रत्यधिकारिणी नयतीति त्रिनयना।' तीन मार्गों से दक्षिण, उत्तर और ब्रह्म-मार्ग से तात्पर्य है (देवी-पुराण)।–

दक्षिणं चोत्तरं लोकं, तथा ब्रह्मायनं परम्।
नयं सन्मार्ग - वर्गं च, नेत्री त्रि - नयना मता।।

◆◆प्रार्थना◆◆

सूर्य, चन्द्र और अग्नि–ये तीन जिसके नेत्र हैं और जो इन तीन नेत्रों द्वारा विश्व का पालन, विकास व समृद्धि करती हैं, अथवा जो तीन मार्गों–१. दक्षिण, २. उत्तर, ३. ब्रह्म का निरूपण करती हैं, अथवा जो १. प्रत्यक्ष, २. अनुमान और ३. शब्द–तीन प्रमाणों, १. सत्त्व, २. रजस् तथा ३. तमस्–तीन गुणों, १. श्रवण, २. मनन एवं ३. निदिध्यासन–तीन कार्यों का निरूपण करती हैं, उन त्रि-नयना त्रिपुरा भगवती श्रीललिताम्बा को मैं सदा भजता रहूँ और उनकी कृपा को प्राप्त करता रहूँ।

***

(४५४) श्रीलोलाक्षी-काम-रूपिणी

चञ्चल नेत्रवाली। यह प्रगति-शील शक्ति का द्योतक है। 'काम'– वासना या अनुराग को कहते हैं, जो दो प्रकार का है–१. शुद्ध वासना और २. मलिन वासना। पूर्व-काम या वासना को पर-वासना और पर-काम-वासना को अपर-वासना कहते हैं। यहाँ 'काम' से पर-वासना से तात्पर्य है, जो मुक्ति-दायिनी है। अथवा 'काम-रूपिणी' से इच्छा-रूपिणी अर्थात् जब जैसी इच्छा हुई, वैसा ही रूप धारण करनेवाली से तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपका चञ्चल-लोचन कामेशी के रूप में यजन-पूजन-भजन करते हैं, वे सभी के मनों को मथनेवाले हो जाते हैं।

***

(४५५) श्रीमालिनी

मालावाली। ५१ मातृकाभिमानी देवता की संज्ञा 'मालिनी' है। सात वर्ष की कुमारी को भी 'मालिनी' कहते हैं। अथवा वृत्त-विशेष मन्दाकिनी की भी संज्ञा 'मालिनी' है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको मातृकाओं के सर्व-श्रेष्ठ-स्वरूप मालिनी के रूप में, पद्म-माला धारण किए हुए गौर-वर्णा कुमारी समझ कर निरन्तर ध्यान करते हैं, उनके सभी श्रेय निरन्तर फलते-फूलते रहते हैं।

***

(४५६) श्रीहंसिनी

'हंसायति विशेषा अस्यामभेदेन सन्तीति हंसिनी।' हंस-स्वरूपा को भी 'हंसिनी' कहते हैं। यहाँ 'हंस' से आत्मा और परमात्मा दोनों का बोध होता है। अथवा हंस-मन्त्र अर्थात् अजपा-मन्त्र-स्वरूपा है, ऐसा भी तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको तुरीय सन्ध्या में अजपा गायत्री 'हंस' और इसके विपरीत 'सोऽहं'-स्वरूप में जपते हैं, वे आप में प्रतिबिम्बित होकर सायुज्य मुक्ति को प्राप्त करते हैं।

***

(४५७) श्रीमाता

इसकी व्याख्या हेतु प्रथम नाम की व्याख्या देखें। दसवीं नित्या की भी संज्ञा 'माता' है। लक्ष्मी-बीज की भी एक संज्ञा 'माता' है-'श्रीर्मा रमा च कमला, माता लक्ष्मीश्च मङ्गला।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! संसार में जन्म लेकर जो माता की सेवा नहीं करता, वह कुपूत है, कृतघ्न है और खल है, दुष्ट है। उसका कभी कल्याण नहीं होता।

***

(४५८) श्रीमलयाचल-वासिनी

मलय पर्वत पर रहनेवाली। 'शाबर-चिन्तामणि' में कही गई मलयालय-भगवती है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको मलयाचल पर बसनेवाली, मोती की सी आभावाली, सफेद वस्त्र-सफेद कमलों की माला धारण करनेवाली मूर्ति के रूप में स्मरण करते हैं, उनके पास तीनों प्रकार के ताप (१. दैहिक, २. दैविक और ३. भौतिक) फटकने नहीं पाते।

***

(४५९) श्रीसुमुखी

सुन्दर मुखवाली। सुन्दरता से केवल बाह्य सुन्दरता से तात्पर्य नहीं है, अपितु आन्तरिक सुन्दरता का भी बोध होता है। ज्ञान से ही मुख की कान्ति अधिक होती है (श्रुति)–

शोभतेऽस्य मुखं य एवं वेद।
ब्रह्म-विद् इव ते सौम्य ! मुखमाभाति।।

षोडशी भगवती के अङ्ग-देवताओं में एक 'सुमुखी' भी हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जिन भक्तों की दृष्टि में आप सुमुखी भगवती आती हैं, वे सभी मन्त्र-यन्त्र को अपनी बुद्धि में धारण कर लेते हैं और वेदों, तन्त्रों के सभी भेदाभेदों को जान लेते हैं।

***

(४६०) श्रीनलिनी

कमल-रूपा। भगवती के हाथ-पैर, मुख, नेत्र आदि अवयव 'नलिनी' अर्थात् कमल-जैसे सुन्दर हैं। 'नल+उणादि इन् च' का प्रकाश-द्योतक अर्थ है। अथवा नल नाम के राजा, जिसकी उपासना से तादात्म्य-भाव में स्थित हुए, वह।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको कमलिनी की तरह विलास करनेवाली समझ कर नित्य आपका ध्यान, पूजन, भजन करते हैं, वे कमल के समान शोभायमान हो जाते हैं और उनकी ख्याति दूर-दूर तक फैल जाती है।

***

(४६१) श्रीसुभ्रूः

सुन्दर भौंहोंवाली। 'भ्रम् उणादि डू' के भाव में वृत्ति-बोधक है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपकी भौहें एक ओर इतनी टेढ़ी रहती हैं कि उन्हें देखते हुए सूर्यादि रात-दिन गतिमान् रहते हैं, तो दूसरी ओर भक्तों को वे सदैव सु-भ्रूः ही दिखाई देती हैं। यही नहीं जो भक्त आपकी सु-भ्रूः को ध्याता है, उसकी स्वयं की भौहें टेढ़ी होने पर भी शुभ-प्रद मानी जाती हैं।

***

(४६२) श्रीशोभना

सुन्दर शील के कारण यह नाम है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो आपके सब प्रकार से शोभित चरण-कमलों को पूजते हुए आपके मन्त्र को जपते हैं, वे अधिकाधिक रूपवान् हो जाते हैं और उनके सभी कार्य-कलाप शुभ-प्रद होते हैं।

***

(४६३) श्रीसुर-नायिका

'सुर' अर्थात् देवताओं की ईश्वरी। इससे बहुत बड़ी महिमा का बोध होता है। 'श्रुति' भी कहती है कि–'महत्तरा महिमा देवतानाम्।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि शिव, विष्णु, वरुण, इन्द्र, गणेश, बटुक और हनुमान आदि को साधने की इच्छा है, तो पहले सुरों की नायिका अधीश्वरी माता श्रीललिताम्बा को भजो। इसके बाद सभी देवों का साधन सुगम हो जाएगा।

***

(४६४) श्रीकाल-कण्ठी

काल-कण्ठ की स्त्री या शक्ति। 'काल-कण्ठ'–शिव का एक नाम है क्योंकि 'काल' अर्थात् विष को शिव ने पिया था। 'कालञ्जर' में इस नाम का शिव-लिङ्ग भी है। इस क्षेत्र की अधिष्ठातृ देवी का नाम 'काल-कण्ठी' है।

अथवा मधुर अस्फुट ध्वनि को 'कलः वा स्वार्थिक अण्' की योजना से 'कालः' कहते हैं। इसी प्रकार मधुर और अस्फुट ध्वनि करनेवाली से कुण्डली का भी बोध होता है, जिसकी ध्वनि अत्यन्त मधुर और स्फुट है।

अथवा 'काल-कण्ठी' नाम की एक भगवती हैं, जिसका आविर्भाव 'दारुकासुर-वध' के निमित्त हुआ (लिङ्ग-पुराण)।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको एक चित्त से स्मरण करते हैं, उनके स्वर मधुर झरने बरसानेवाले हो जाते हैं और उनके मन परोपकार में तत्पर रहते हैं।

***

(४६५) श्रीकान्ति-मती

कान्तिवाली अर्थात् सुन्दरी। इसकी व्याख्या पहले हो चुकी है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सबको मुग्ध करनेवाली मनोहरता की प्राप्ति के लिए, जिसे देखते-देखते तृप्ति न हो, उन त्रैलोक्य को मोहित करनेवाली कान्तिमती माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-पूजो।

***

(४६६) श्रीक्षोभिणी

'क्षोभयतीति क्षोभिणी'। यह आदि 'धर्म-शक्ति' है, जिससे सृष्टि की प्रथम क्रिया का स्पन्दन होता है। उपहित चैतन्य-शक्ति में क्षोभ अर्थात् कम्पन या स्पन्दन होने से विन्दु या बीजांकुर

के दो भाग होते हैं–१. रक्त-बिन्दु अर्थात् 'शक्ति' और २. शुक्ल-बिन्दु अर्थात् 'शिव' पृथक् हो जाते हैं। तभी सृष्टि की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। यह तो हुई समष्टि की कथा। व्यष्टि में मन की क्षोभ-कारिणी वृत्ति को भी 'क्षोभिणी' कहते हैं। 'सर्व-संक्षोभण-चक्र' की स्वामिनी को भी 'क्षोभिणी' कहते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! गुणों का आवर्तन करनेवाला क्षोभ सृष्टि के विस्तार का मूल कारण है और यह आप में स्वभावतः होता रहता है। इसी से आपको क्षोभिणी कहा जाता है।

***

(४६७) श्रीसूक्ष्म-रूपिणी

दुर्ज्ञेया अर्थात् कठिनाई से जानने योग्य रूपवाली। 'श्रुति' भी कहती है–'सूक्ष्मात् सूक्ष्म-तरं नित्यम्', 'अणोरणीयान्' इत्यादि। सूक्ष्म रूप से मन्त्र या शाब्दिक रूप से तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप अव्यक्त स्वरूपवाली, अणु से भी अणु अर्थात् छोटी से भी छोटी, बुद्धि व मन तथा वाणी से भी प्रत्यक्ष न होनेवाली हैं। आप सूक्ष्म-रूपिणी को हम कैसे और किन उपायों से ध्यावें-विचारें, यह समझ में नहीं आता। आप ही कृपा करें।

***

(४६८) श्रीवज्रेश्वरी

उक्त नाम की षष्ठी तिथि-नित्या 'जालन्धर-पीठ' की अधिष्ठात्री भगवती हैं। अथवा श्री-चक्र के ११वें और १२वें वज्र-मणि-प्राकार के मध्य में वज्राख्या नदी है। इसकी ईश्वरी या अधिष्ठातृ देवी। अथवा इन्द्र को वज्र नाम का महास्त्र प्रदान करनेवाली–

'तज्जलादुत्थिता देवी, वज्रं दत्वा बल-द्विषे।' (ब्रह्माण्ड-पुराण)।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप जालन्धर-पीठ की अधिनाथा वज्रेश्वरी हो। अथवा आप वज्रेश्वरी नित्या स्वरूपिणी हो। आपको तपस्या से प्रसन्न कर इन्द्र ने आपसे वज्र प्राप्त किया था। भक्त-गण भी आपकी सन्तुष्ट कर आपसे अभीष्ट वर की प्राप्ति करते हैं।

***

(४६९) श्रीवाम-देवी

शिव की 'देवी' अर्थात् शक्ति। 'वाम' का अर्थ मननीय है। यह शिव का एक वैदिक नाम है–'तं देवा अब्रुवन्नयं वै नः सर्वेषां वाम इति तस्माद् वामदेवः' (ऐतरेय श्रुति) अर्थात् देवताओं ने उनसे कहा कि हम लोगों से यह 'वाम' अर्थात् श्रेष्ठ हैं, इसी से इनका नाम 'वाम-देव' हुआ। यह नाम अर्द्ध-नारीश्वर शिव का है क्योंकि वाम-भाग-स्थित देवी से प्रकाशित है–'दिव् प्रकाशे'। यह सदा-शिव के व्यूहान्तर्गत मूर्ति विशेष का भी नाम है (शिव-पुराण)।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! अमृत प्रदान करने, अति सुन्दर होने, शिव के साथ विहार करने, वाम-मार्ग अथवा वामाचार से तृप्त होने के कारण आप वाम-देवी को सभी भजते हैं, ध्याते-पूजते हैं।

***

(४७०) श्रीवयोऽवस्था-विवर्जिता

'वय'=वयस अर्थात् आयु (उम्र) की अवस्थाओं से रहिता अर्थात् बाल आदि कोई अवस्थावाली नहीं है। महा-काल-कृत 'सुधा-धारा-स्तव' में भी कहा है-'न बाला न च त्वं वयस्था न वृद्धा.....।' इससे निराकारा का बोध होता है क्योंकि आकार की कोई-न-कोई अवस्था होती ही है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आप समस्त कामनाओं की ईश्वरी को वयोऽवस्था रहित स्मरण करते हैं, वे बहुत सौभाग्यशाली होते हैं और जरा, बुढ़ापा व मृत्यु को भी जीत लेते हैं।

***

(४७१) श्रीसिद्धेश्वरी

सिद्ध उपासकों की स्वामिनी। 'काशी' में इस नाम की भगवती की एक मूर्ति भी है। अथवा 'सिद्धा-ईश्वरी या, सा सिद्धेश्वरी' अर्थात् प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम अर्थात् वेद या तन्त्र-इन तीनों प्रमाणों से जिसका अस्तित्व सिद्ध है, वैसी परमा सत्तावली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! कपिल, सनक, सनन्दनादि, दत्तात्रेय तथा गोरखनाथ आदि अनेक सिद्धों ने आपके चरण-कमलों की पूजा तथा स्तुतियाँ की हैं। आपकी पूजा की विस्तृत परम्परा है। जिन्होंने सुकृत पुण्यादि नहीं किया है, जो टेढ़ी-मेढ़ी तर्कों की तरङ्गों में खेलते रहते हैं, वे मलिन मनवाले ही आप सिद्धेश्वरी को स्मरण नहीं कर पाते।

***

(४७२) श्रीसिद्ध-विद्या

जो विद्या सिद्ध हो अर्थात् जिसमें तर्क का प्रतिष्ठान अर्थात् स्थान नहीं है। इसका समर्थक 'ब्रह्म-सूत्र'-'तर्काप्रतिष्ठानात्' है। प्रकरण-क्रम से यहाँ 'पञ्चदशी विद्या' का बोध होता है, कारण शास्त्रों का सिद्धान्त है कि इस विद्या में सिद्ध, असिद्ध, मित्र और अरि का विचार नहीं किया जाता।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त भक्ति-सहित आपके मन्त्रादि को जपते हैं, वे पूर्व जन्मों में सिद्धि पाए हों या न पाए हों, इस जन्म में ऊँची सिद्धि को प्राप्त करते हैं।

***

(४७३) श्रीसिद्ध-माता

सिद्धों की 'माता' अर्थात् रक्षा करनेवाली। अथवा 'सिद्ध एव माता यस्याः सा' अर्थात् सिद्ध पुरुष ही जिसके 'माता' अर्थात् मान करनेवाले हैं। मान करने से तात्पर्य है–माप करने से अर्थात् धारणा करने से। इस प्रकार भगवती–'मेया' है और सिद्ध या ज्ञानी पुरुष–'माता' हैं तथा प्रत्यक्षानुभव, युक्ति और शब्द–'मान' हैं। इन्हीं 'मातृ', 'मान' और 'मेय' की त्रिपुटी का प्रतिपादन शास्त्रों में है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! सांख्य, वेदान्त, योग एवं कर्म-परायण कर्मठ सभी लोग अन्त काल में आप ही मूल-माया स्वरूपिणी की शरण में उपस्थित होते हैं और आप ही इनकी रक्षा करती हुई सिद्ध-माता कहलाती हो।

***

(४७४) श्रीयशस्विनी

यशवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जब आपके भक्त आपके पराक्रम का यशगान करते हैं, तब वे अपने मन को पवित्र करते हुए अपनी सभी प्रवृत्तियों को यशस्विनी बना लेते हैं।

***

(४७५) श्रीविशुद्धि-चक्र-निलया

'विशुद्धि-चक्र' में रहनेवाली। इस नाम से 'वर्ण-माला'-ग्रथने के अनुसार 'विशुद्धि-चक्र' से आरम्भ कर 'आज्ञा-चक्र' तक के छहों चक्रों और इसके पश्चात् 'सहस्त्र-दल' में रहनेवाली भगवती के डाकिनी आदि सातों स्वरूपों के लक्षणों और संज्ञाओं का उल्लेख है। ग्रीवा-कूप अर्थात् कण्ठ-कूप में १६ दलों का पद्म या चक्र है। इसी को 'विशुद्धि-चक्र' कहते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त सोलह दलवाले विशुद्ध-चक्र में आपको ध्याते हैं-भजते हैं, वे अपने शत्रुओं अथवा द्रोहियों पर विजय प्राप्त करते हैं।

***

(४७६) श्रीआरक्त-वर्णा

पूर्ण लाल रङ्ग की। अथवा 'आरक्त' पाँच को कहते हैं और 'वर्ण' अक्षर-वाचक है। इस प्रकार पञ्चाक्षरवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त रक्त वर्णवाले आपके चरणों की प्रभा को अपने मन-हृदय में धारण करते हैं, वे माणिक्य आदि की कान्ति से अधिक कान्तिवाले होकर आपका सान्निध्य प्राप्त करते हैं।

***

(४७७) श्रीत्रिलोचना

तीन आँखवाली। इसकी व्याख्या पहले की जा चुकी है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! तीनों भूर्भुवादि लोकों को समान रूप से देखने, पालन तथा सर्व-दुःखों से बचाने हेतु आप सृष्टि के आदि से ही त्रि-लोचना हुई हो एवं इनसे अपने आश्रितों को आप सदा अभय देती रहती हो।

***

(४७८) श्रीखट्वाङ्गादि-प्रहरणा

खाट के अङ्ग आदि जिसके आयुध हैं। 'खट्वाङ्ग' का अर्थ है–खट्वा-पाद। अथवा (लकड़ी) में लगे नर–कपाल की भी संज्ञा खट्वाङ्ग है। इसकी लोक-प्रसिद्ध पर्यायवाची संज्ञा है–'सांसरि'। इस पद का रहस्यार्थ 'खट् कांक्षायां' धातु से व्यक्त होता है।

◆◆स्तुति◆◆

त्रिशूल, खड्ग, अंकुश आदि खट्वाङ्गों को धारण करनेवाली, शरणागतों की रक्षा करनेवाली माता श्रीललिताम्बा को भव-सागर से सन्तरण के लिए हम बारम्बार नमस्कार करते हैं।

***

(४७९) श्रीवदनैक-समन्विता

एक मुखवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! तुम्हारी पीड़ाओं, सङ्कटों के विनाश के लिए श्रियों की एक-मात्र सदन माता श्रीललिताम्बा ही पर्याप्त हैं। अन्य नाना देवों के पास भटकना व्यर्थ है।

***

(४८०) श्रीपायसान्न-प्रिया

पायसान्न अर्थात् अविकारान्न की, जिसे परमान्न कहते हैं, प्रिया अर्थात् पसन्द करनेवाली। 'पय' का एक अर्थ अविकार है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि दीनता से व्याकुल हो गए हो और तुम्हें सुयश, विद्या एवं नैरोग्य-लाभ की इच्छा हो, तो तीनों लोकों की जननी, खीर आदि को पसन्द करनेवाली माता श्रीललिताम्बा का दुग्ध से अभिषेक करो और पायस (खीर, खोया, पेड़ा) की बलि देकर उन्हें प्रसन्न करो।

***

(४८१) श्रीत्वक्स्था

त्वचा धातु में रहनेवाली। इससे तदभिमानत्व का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

जो प्राणियों को गरम-ठण्डे आदि का ज्ञान करानेवाली हैं, जो स्पर्श-इन्द्रिय के व्यापार की मूल-भूत शक्ति हैं, उन त्वक्-स्थित (चर्म-स्थित) माता श्रीललिताम्बा को मैं सदा भजता रहूँ।

***

(४८२) श्रीपशु-लोक-भयङ्करी

अज्ञानियों के लिए भयावहा। अद्वैत-भाव-विहीन को ही 'पशु' कहते हैं—द्वितीयाद् वै भयं भवति' (श्रुति)। 'पशु' की श्रौत परिभाषा पहले दी जा चुकी है।

◆◆प्रार्थना◆◆

सन्तों, महात्माओं की सदा कल्याण करनेवाली, भजते हुए भक्तों को अभय प्रदान करनेवाली, शिव-शक्ति के अद्वैत ज्ञान से रहित पशुओं को भय देनेवाली माता श्रीललिताम्बा को मैं सदा भजता रहूँ।

***

(४८३) श्रीअमृतादि-महा-शक्ति-संवृता

अमृता, आकर्षिणी, इन्द्राणी आदि १६ महा-शक्तियों से, जो एक-एक दल में हैं, घिरी हुई। इनकी व्याख्या 'भावनोपनिषत्' में है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको विशुद्ध-चक्र में अमृतादि सोलह महा-शक्तियों से घिरी हुई अर्थात् सोलह शक्तियों को सोलह दलों में तथा मध्य में माता श्रीललिताम्बा को ध्याते हैं-भजते हैं, वे धन्य हैं।

***

(४८४) श्रीडाकिनीश्वरी

'डाकिनी' नाम की भगवती। आप 'विशुद्धि-चक्र' की अधिष्ठात्री देवी हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! हे विशुद्ध-चक्र में रहनेवाली! हे महा-महिमावाली! हे कपालों की माला पहननेवाली! हे हाथों में कृपाणवाली! आप शीघ्र ही मेरे पाप-रूप बालकों के लिए डाकिनीश्वरी डाइनों के मुखिया डाइन बनो और मेरे पापों का नाश करो।

***

(४८५) श्रीअनाहताब्ज-निलया

'अनाहत कमल' में रहनेवाली। इस चक्र में अनाहत ध्वनि सुन पड़ती है, इसी से इस कमल को 'अनाहत-चक्र' कहते हैं, जो हृदय में १२ दलों का है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! चक्र-भेद में लगे हुए, योग-मार्ग में प्रवीण भक्त साधक ही आपको अनाहत-चक्र की कर्णिका में रहनेवाली के रूप में ध्याते हैं-भजते हैं और इसी जन्म में महामना, योगीश्वर हो जाते हैं।

***

(४८६) श्रीश्यामाभा

श्याम अर्थात् काले रङ्ग की। अथवा 'श्यामा' से १६ वर्षवाली से तात्पर्य है। इस प्रकार यह भगवती १६ वर्ष की युवती है, ऐसा बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! स्वर्ग में देवों की अङ्गनाएँ तथा अप्सराएँ अपनी कामनाओं की पूर्ति एवं भू-तल पर मानवों की स्त्रियाँ भोग-ऐश्वर्यादि की पूर्ति के लिए चारों पहर यमुना के असित प्रवाह और महादेव के नील-कण्ठ की शोभा जैसी आपकी श्याम प्रभा की उपासना करते हैं तथा आपके गुणों का गुणगान करते हैं।

***

(४८७) श्रीवदन-द्वया

दो मुखवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! इन्द्रियों के बाह्य और आभ्यन्तर अर्थात् बाहरी व भीतरी दोनों प्रकार की प्रवृत्तियों के कारण विद्वान् आपको वदन-द्वया अर्थात् दो मुखवाली कहते हैं। आपका एक मुख बाह्य प्रवृत्ति-रूप है, दूसरा मुख आभ्यन्तर प्रवृत्ति-रूप है।

***

(४८८) श्रीदंष्ट्रोज्ज्वला

वाराही के समान बड़े-बड़े दाँतों से शोभिता।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे भूमि रूप पदोंवाली, हे गगन रूप नाभिवाली, हे सूर्य-चन्द्र-अग्नि-मय तीन नेत्रवाली, हे शिव-हृदयवाली, हे वेद-मय नासिकावाली, हे डाढ़ो से उज्ज्वल चमकती हुई दिव्य मस्तकवाली माता श्रीललिताम्बा हम आपको प्रणाम करते हैं।

***

(४८९) श्रीअक्ष-मालादि-धरा

'अक्ष-माला' आदि चार आयुधों को रखनेवाली। ये चार आयुध हैं–१. अक्ष-माला, २. त्रिशूल, ३. कपाल और ४. डमरु।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे अक्ष-माला, जपवटी, वर-अभय-पुस्तक धारण करनेवाली, हे जपा-पुष्प-जैसे लाल-लाल वस्त्र धारण करनेवाली, हे मन्द-मन्द मुस्कुराहटवाली माता श्रीललिताम्बा हम पर कृपा करो, हम सदैव आपको भजते-ध्याते-पूजते रहें।

***

(४९०) श्रीरुधिर-संस्थिता

रक्त में रहनेवाली। पूर्वोक्त 'डाकिनी' भगवती जहाँ जीव की त्वचा में अवस्थित हैं, वहाँ यह 'राकिनी' भगवती–रक्त में रहती हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जो शक्ति रक्त में चेतना के रूप में विराजमान है, जो सम्पूर्ण शरीर के अवयवों का पोषण करती है, उस रुधिर-स्थिता शक्ति माता श्रीललिताम्बा को सदैव प्रणाम करो और अपने शरीर की रक्षा करते हुए उच्च-से-उच्च भावों को धारण करते रहो।

***

(४९१) श्रीकाल-रात्र्यादि-शक्त्यौघ-वृता

काल-रात्रि आदि शक्ति-समूह से घिरी हुई। 'अनाहत-चक्र' के १२ दल हैं। इन दलों में 'काल-रात्रि' आदि १२ शक्तियाँ अवस्थित हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! भगवती काल-रात्रि आदि शक्तियों से सदा सेवित माता श्रीललिताम्बा का भजन-पूजन करो और काल से प्रभावित हुए बिना उच्च-से-उच्च सङ्कल्पों को पूरा करो।

***

(४९२) श्रीस्निग्धौदन-प्रिया

'स्निग्ध' अर्थात् घृत से पके 'ओदन' अर्थात् चावल की प्रिया। 'राकिणी' भगवती की पूजा में यही नैवेद्य प्रशस्त है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको स्निग्ध घृत से पूर्ण खीर आदि नैवेद्य अर्पित कर, सुवासिनियों, कुमारियों को तृप्त करते हैं, वे आपकी कृपा के पात्र बनकर अन्त में आपका सान्निध्य प्राप्त करते हैं।

***

(४९३) श्रीमहा-वीरेन्द्र-वरदा

'वीर' का अर्थ है—पराक्रमी या धीर। यहाँ पाशविक पराक्रम से नहीं, उच्च श्रेणी के आध्यात्मिक ज्ञान-वीर से ही तात्पर्य है। ब्रह्म-रसामृत के पान करनेवाले ही वीर हैं। 'त्रितया भोक्ता वीरेशः' (शिव-सूत्र) अर्थात् तुरीय अवस्था का अनुसन्धान करनेवाले वीर हैं। अतः ब्रह्मामृत-रस के पान करनेवाले वीरों के 'इन्द्र' वही हैं, जिन्होंने 'ब्रह्माहमस्मि' का ज्ञान दृढ़ कर लिया है। 'इन्द्र' की श्रौत परिभाषा भी यही है—'इदमदर्शमिदमदर्शमिति तस्मादिन्द्रो नाम।'

अथवा 'महा-वीर' अर्थात् प्रह्लाद और इन्द्र को वर देनेवाली। 'देवी-भागवत' में कथा है कि प्रह्लाद और इन्द्र दोनों के दिव्य सौ वर्ष तक युद्ध करने के बाद दोनों की स्तुति पर भगवती ने उन्हें वर दिया था।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको महावीरों तथा इन्द्र को वरदान देनेवाली के रूप में ध्याते हैं-भजते हैं, वे उन लोगों की भाँति सुखी, विजयी होते हैं।

***

(४९४) श्रीराकिण्यम्बा-स्वरूपिणी

माता-स्वरूपा राकिणी।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! राकिणी अम्बा-स्वरूपिणी आपकी कला स्फुरण से प्राण बल पाता है और हम सब सुखी होते हैं। आपकी कला अनाहत-चक्र अर्थात् हृदय-चक्र में जब तक स्फुरित रहती है, तब तक जीव सुखी रहता है।

***

(४९५) श्री मणिपूराब्ज-निलया

'मणिपूर कमल' में रहनेवाली। 'मणिपूर' नामक दश-दल का चक्र नाभि में है। इसकी अधिष्ठात्री है 'लाकिनी' भगवती।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! दश-दलवाले नाभि पद्म मणिपूर में आप लाकिनी-शक्ति-स्वरूपा हो। समान प्राण के ऊपर अधिकारिणी आपकी इस शक्ति से जीव भुक्त अन्नादि को समान करता है। योगी लोग आपकी इस रुचिर मूर्ति को देखकर समाधि में निर्विघ्न सिद्धि प्राप्त करते हैं और आप ही में निरत रहते हैं।

***

(४९६) श्रीवदन-त्रय-संयुता

तीन मुख-मण्डलवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! कोई-कोई भक्त आपको नाभि के आकाश में नियत रूप से अन्तर्दृष्टि द्वारा, प्रवाल अर्थात् मूँगे जैसी सुन्दर अरुण-प्रभावाली, तीन मुखोंवाली देखते हैं। ऊपर और नीचे तथा मध्य में प्रवाहवाली होने से आप तीन मुखोंवाली दिखाई देती हो।

***

(४९७) श्रीवज्रादिकायुधोपेता

वज्र आदि आयुधों को धारण करनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! वज्र, दण्ड आदि आयुधोंवाली माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और अपने को सभी प्रकार के भयों से मुक्त कर लो।

***

(४९८) श्रीडामर्यादिभिरावृता

'डामरी' आदि १० शक्तियों से घिरी हुई। दश-दल मणिपुर के एक-एक दल में अवस्थिता इन १० शक्तियों से चित्त-वृत्तियों से तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप डामरी आदि से फट्-कारिणी तक दस परा-शक्तियों से आवृत हो। हे माता जो भक्त आपको इस रूप में ध्याते हैं-भजते हैं, उनका आत्यन्तिक कल्याण होता है।

***

(४९९) श्रीरक्त-वर्णा

लाल वर्णवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको नासाग्र-दृष्टि से, मूँगे-जैसी लाल वर्णवाली ध्याते हैं, वे शीघ्र ही आपका दर्शन प्राप्त कर लेते हैं।

***

(५००) श्रीमांस-निष्ठा

मांस में रहनेवाली। उस धातु की अभिमानिनी देवी।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! सब जगह अपनी व्याप्ति को चरितार्थ करने के लिए आप अपनी एक कला से शरीरधारी प्राणियों के पालन के लिए मांस में रहनेवाली शक्ति हो।

***

श्रीललिता-सहस्त्र-नाम

आदि-गुरु लोपामुद्रा, भगवान् हयग्रीव एवं श्री अगस्त्य की कथा

* पूज्य श्री १००८ श्रीस्वामी अद्वयानन्द जी सरस्वती,
श्री छाया-पीठ, त्रिची, तमिलनाडु

अगस्त्य एक विशिष्ट ऋषि हो गए हैं। यज्ञ-शाला में रखे हुए एक कुम्भ (कलश) से उनका जन्म हुआ था, जिससे वे 'कुम्भ मुनि' कहे जाते थे। आकार में यद्यपि वे छोटे थे, किन्तु तपस्या की अपनी शक्तियों से वे महान् थे।

वृद्राण नामक एक असुर समुद्र में छिपा रहता था। इन्द्र उसे खोज नहीं पाए, तो उन्होंने अगस्त्य ऋषि से सहायता माँगी। उन्होंने अपनी शक्तियों से सारे समुद्र को सुखाकर एक काले चने के बराबर बना दिया और उसे निगल गए। एक बार विन्ध्य पर्वत ने हिमालय की प्रति-द्वन्द्विता में ऊँचा होना प्रारम्भ किया और सूर्य तथा चन्द्रमा के मार्ग को अवरुद्ध कर दिया। देवता डर गए और सहायता के लिए अगस्त्य के पास पहुँचे। अगस्त्य ने उसे पृथ्वी के नीचे ढकेल दिया और पृथ्वी के समतल बना दिया। वातापी नामक एक असुर भोजन के रूप में अगस्त्य के पेट में पहुँच गया, वहाँ जीवित हो उठा और अगस्त्य के पेट को फाड़कर उसने बाहर निकलना चाहा, किन्तु अगस्त्य ने उसे पचा कर अपने पेट में ही समाहित कर लिया। कैलास में शिव-विवाह के समय पृथ्वी-वासी और सभी देवों ने वहाँ भीड़ लगा ली, जिससे पृथ्वी का उत्तरी भाग नीचे को झुक गया और दक्षिणी भाग ऊपर को उठ गया। भगवान् शिव की आज्ञा से अगस्त्य अकेले ही दक्षिण के पोथिया पर्वत पर गए और पृथ्वी को पूर्व-स्थिति में पुनः ले आए। राजा नहुष ने एक सौ अश्वमेध यज्ञ किए, इन्द्र का पद प्राप्त किया और पालकी पर चढ़कर इन्द्राणी को पाना चाहा। उसने अगस्त्य के प्रति निरादर का व्यवहार किया, जिससे उन्होंने उसे अजगर हो जाने का शाप दे दिया। इन सब चमत्कारों के करने की शक्ति उन्हें अपनी पत्नी लोपामुद्रा से मिली थी।

लोपामुद्रा को अपने बचपन में ही पराम्बा के श्री श्रीविद्या-मन्त्र की दीक्षा मिल गई थी। श्रीललिता-अम्बिका के प्रति अपनी निष्ठा के फल-स्वरूप उन्होंने सभी सिद्धियाँ प्राप्त कर ली थीं। इसी से भगवान् हयग्रीव अपनी दैनिक ललिताम्बिका-पूजा के अन्त में लोपामुद्रा की सुवासिनी-पूजा किया करते थे। यह बात देवताओं से अगस्त्य को ज्ञात हुई। उन्होंने लोपामुद्रा से पूछा कि 'तुम तो मुझसे कभी अलग नहीं होतीं और मेरे साथ एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा करती रहती हो। किस प्रकार प्रति-दिन काँचीपुरम् में हयग्रीव द्वारा की जानेवाली सुवासिनी-पूजा में उपस्थित रहती हो?'

लोपामुद्रा ने उन्हें श्री श्रीविद्या-मन्त्र में अपनी दीक्षा और श्री-यन्त्र की अपनी उपासना की बात बताई, जिसके फल-स्वरूप पराम्बा की कृपा से उन्हें सिद्धियाँ प्राप्त थीं। इस रहस्य की बात को जानकर अगस्त्य ने श्री श्रीविद्या-उपासना करने की अपनी इच्छा प्रकट की। लोपामुद्रा इससे

प्रसन्न हुईं और कहा कि–'संसार के लोगों के हित के लिए और लाखों भक्तों को पराम्बा की महिमा से परिचित कराने के उद्देश्य से तथा श्री श्रीविद्या के मन्त्र में उन्हें दीक्षित करने के लिए ललिताम्बा ने हयग्रीव को काञ्चीपुरम् में प्रकट होने का निर्देश दिया है। हयग्रीव ने, जो बैकुण्ठ के नारायण हैं, सीधे अम्बिका से दीक्षा प्राप्त की है। इसलिए आप कृपया हयग्रीव के पास जाएँ और सीधे उन्हीं से दीक्षित हों।'

तदनुसार अगस्त्य काञ्ची की महती नगरी में पहुँचे। हयग्रीव देवताओं और अन्य भक्तों के बीच प्रेमानन्द में मग्न थे। अगस्त्य ने उन्हें दण्ड-वत् प्रणाम किया और उठकर उनके समक्ष खड़े हुए, किन्तु हयग्रीव ने उन्हें मात्र एक दर्शनार्थी भक्त समझा। अतः उन्होंने अपने हाथ से उन्हें बैठने का सङ्केत किया और इससे अधिक ध्यान उनके प्रति नहीं दिया। अगस्त्य न उनके निकट पहुँच पाए और न ही उनसे व्यक्तिगत रूप से बात कर पाए। अन्य भक्तों के साथ बैठने और हयग्रीव द्वारा वर्णित देवी-माहात्म्य को सुनने तथा उनके द्वारा की जानेवाली श्रीचक्र-पूजा में तन्मय होने में ही उन्होंने सन्तोष माना।

श्रीचक्र-पूजा के अन्त में हयग्रीव ने एक आसन दिया और अचानक ही मानों शून्य से आकर उस आसन पर लोपामुद्रा बैठी हुई दिखाई दीं। हयग्रीव ने लोपामुद्रा का साक्षात् देवी-स्वरूप में स्वागत किया, देवी के समान उनकी पूजा की और दूध से भरा एक पात्र उन्हें भेंट किया। लोपामुद्रा ने पात्र को ले लिया, एक घूँट उसमें से पिया, फिर हयग्रीव को पात्र लौटाकर तुरन्त ही अन्तर्धान हो गईं। हयग्रीव ने बचे हुए दूध में से कुछ स्वयं लिया और पूजा के बाद भक्तों को प्रसाद बाँटा। प्रसाद पाकर भक्त लोग अपने-अपने घर चले गए। अगस्त्य भी अपनी कुटिया को वापस लौटे, जहाँ उन्होंने यह देखकर आश्चर्य किया कि लोपामुद्रा वहाँ बैठी किसी स्त्री से पराम्बा की महिमा की चर्चा कर रहीं हैं।

अगस्त्य प्रति-दिन हयग्रीव के पास उनसे दीक्षा लेने के उद्देश्य से जाते रहे। एक दिन लोपामुद्रा ने अगस्त्य से पूछा कि 'आप हयग्रीव से व्यक्तिगत रूप से मिले या नहीं और उनसे कुछ उपदेश मिला या नहीं?' अगस्त्य ने बताया कि 'मैं हयग्रीव के निकट नहीं पहुँच सका हूँ। हाँ, उनकी पूजा के समय तुम्हारे प्रकट होने और अन्तर्ध्यान होने का चमत्कार अवश्य देखा है।' लोपामुद्रा ने कहा–'स्वामिन् , जब हयग्रीव आपकी ओर देखें, तो आप उन्हें बताएँ कि मैंने आपको उनके पास भेजा है। इससे आपके उद्देश्य की पूर्ति हो जाएगी।' अगस्त्य ने अगले दिन ऐसा ही किया।

अगस्त्य की बात सुनकर हयग्रीव ने उन्हें निकट बुलाया और उनसे पूछा–'आप कौन हैं? किसलिए आप आए हैं?'

अगस्त्य ने उत्तर दिया–'मैं अगस्त्य मुनि हूँ, लोपामुद्रा का पति। मैं आपसे दीक्षा लेने के लिए आया हूँ।'

हयग्रीव ने उमङ्ग-पूर्वक कहा–'मैं आपको प्रति-दिन देखता था, किन्तु मैं आपको अन्य जैसा ही समझता था और आप पर ध्यान नहीं दिया। यदि आपने पहले ही अपना परिचय दिया होता, तो जो कुछ आप चाहते थे, मुझसे पूर्व ही सीख लिए होते।'

अगस्त्य ने भगवान् हयग्रीव के चरणों पर दण्ड-वत् प्रणाम किया और सविनय कहा–'भगवन् मैंने सभी पवित्र पीठों की यात्रा की है और पुण्य तीर्थों में स्नान किया है। मैंने देखा है कि सर्वत्र लोग अज्ञान के अन्धकार से ढँके हुए हैं और अपना सारा समय खाने-पीने तथा भोग करने में बिताते हैं। मैं समझता हूँ कि यह सब कलियुग का दुष्प्रभाव है। जनार्दन मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, मुझे वह उपाय बताइए, जिससे लोग संसार-सागर को पार कर सकें, मोक्ष पाएँ और आनन्द प्राप्त करें। सर्वोत्तम मार्ग क्या है? मैं ऐसी उपासना करना चाहता हूँ, जिससे सभी सिद्धियों और मुक्तियों की प्राप्ति हो। प्रार्थना है कि कृपया मुझे इन विषयों में प्रबुद्ध करें।'

हयग्रीव बोले–'ओ लोपामुद्रा-पति मुनि अगस्त्य! ये सब बातें मुझे स्वयं देवी ने बताई हैं। यही बातें मैंने ब्रह्मदेव और दुर्वासा को सिखाई हैं। तुम्हारी पत्नी को दुर्वासा ने इनकी शिक्षा दी है क्योंकि उन्होंने उनकी सेवा की थी। अब तुम्हें वह सब बताऊँगा। कृपया सुनें। सर्वोत्तम मार्ग है महा-परा-शक्ति जगन्माता श्रीललिताम्बा की पूजा। वही एक-मात्र हैं, जो कृपा-पूर्वक सबको इस संसार में जो कुछ सर्व-श्रेष्ठ है, दे सकती हैं और पर-लोक में समस्त ज्ञान तथा मुक्ति, मात्र भक्ति से मिल जाती है, भले ही शास्त्रों का ज्ञान न हो और आगमों के अनुसार न चलता हो। परम शिव तक ने देवी-पूजा के द्वारा सभी सिद्धियाँ पाई हैं और वे अर्द्ध-नारीश्वर बने हैं। ब्रह्मा-सहित सभी ने देवी-ध्यान के द्वारा सिद्धियाँ प्राप्त की हैं। सभी सरलता से यह पूजा कर सकते हैं और इस मार्ग द्वारा मोक्ष पा सकते हैं।'

'यही सर्वोत्तम मार्ग है। अज्ञानी लोग ज्ञान-प्राप्ति के लिए, ज्ञानी लोग उच्चतर भूमिकाओं तक पहुँचने के लिए और पापी लोग अपने पापों से छूटने के लिए इस अम्बिका-पूजा को कर सकते हैं। यदि ऋषि और छन्द के न्यास तथा दिग्-बन्धन आदि के साथ विधि-पूर्वक पूजा की जाती है, तो कुछ भी प्राप्त करना असम्भव नहीं है। जो देवी के प्रति मन, प्राण और इच्छाओं को पूर्ण रूप से समर्पित कर देता है और इस दृढ़ विश्वास के साथ अपने कर्म करता जाता है कि वह देवी से भिन्न नहीं है, वह मुक्ति को प्राप्त कर लेता है।'

'ओ ऋषि! यह बात बहुत ही गोपनीय है। मैंने इसे आपको इसलिए बताया है क्योंकि आप लोपामुद्रा के पति हैं, आपने महती तपस्या की है; आप सबके सुख के लिए इच्छुक हैं और देवी ने स्वयं इसकी शिक्षा आपको देने का आदेश किया है। मेरी कामना है कि देवता और अन्य लोग आपसे इसे सीखें और सिद्धियाँ प्राप्त करें।'

अगस्त्य ने पुनः हयग्रीव को दण्ड-वत् प्रणाम किया और प्रार्थना करते हुए पूछा कि 'आप द्वारा उल्लिखित ये महा-परा-शक्ति ललिता कौन हैं? उनका स्वरूप कैसा है? उनकी लीलाएँ क्या हैं?'

हयग्रीव ने कहा–'ओ ऋषि! आज देर हो गई है। कल से मैं आपको क्रमशः बताऊँगा। आप प्रति-दिन नियम से आकर सुन सकते हैं।'

इस प्रकार अगस्त्य का समाधान कर हयग्रीव अम्बिका की पूजा में तत्पर हुए। अगस्त्य ने पूजा देखी, प्रसाद लिया, अपनी कुटिया को लौटे और जो कुछ बीता था, वह सब लोपामुद्रा को बताया। अगले दिन वे हयग्रीव के पास पहुँचे, उनके समक्ष नत-मस्तक हुए और अपना प्रश्न पूछा।

महा-परा-शक्ति श्रीललिता का स्वरूप

हयग्रीव ने कहा–'ओ ऋषि, लोपामुद्रा के पति! इन सभी लोकों का स्रष्टा सभी देवों और मेरे पुत्र ब्रह्मा से महत्तर है। मैं महा-विष्णु और ब्रह्मा का पिता हूँ, विश्व की स्थिति बनाए रखने का कार्य करता हूँ। संहार करनेवाले रुद्र हैं। जीवों को भोगों का अनुभव हो सके और वे मुक्ति के उच्चतर सोपानों पर पहुँच सकें, इसके लिए महेश्वर पूर्व-जन्म की गर्भ-जन्य पीड़ाओं और बीते हुए सभी दुःखों पर पर्दा डाल देते हैं। हे महेश्वर हम तीनों-ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र–से महत्तर हैं। महेश्वर की माया के आवरण से कभी-कभी हम भी अहङ्कार में पड़ जाते हैं और देवी-भक्ति को भूल जाते हैं। जो भूलते हैं, वे अधो-गति को प्राप्त करते हैं और जो देवी की स्तुति करते हैं, वे पुरस्कृत होते हैं। यही कारण है कि शिव और विष्णु-पुराणों में हमारी उन्नति और अवनति का वर्णन मिलता है।'

'हम चार–ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और महेश्वर–अपने-अपने स्वरूपवाले हैं।'

'कृपा करनेवाले ईश्वर अर्थात् सदा-शिव स्वरूपवाले हैं भी और नहीं भी हैं। दूसरे शब्दों में वे 'रूप' और 'अरूप' दोनों हैं। वे महेश्वर से महत्तर हैं। महेश्वर से महत्तर विन्दु-शक्ति हैं और उसका अधिष्ठातृ दैवत है–नाद-शिव। उसे महा-शम्भु भी कहते हैं। नाद-शम्भु और बिन्दु-शक्ति रूप-रहित हैं। मात्र ध्वनि ही उनका रूप है। नाद-शक्ति से महत्तर हैं परम शिव और परमा शिवा। ये ही कामेश्वर और कामेश्वरी के नाम से विख्यात हैं।'

'ब्रह्म का स्थिति (सत्) स्वरूप–कामेश्वर या परम शिव कहलाता है और ज्ञानानन्द (चिदानन्द) स्वरूप–कामेश्वरी या परमा शिवा के नाम से जाना जाता है। कामेश्वर और कामेश्वरी का सम्मिलित स्वरूप ही महा-परा-शक्ति श्रीललिताम्बिका हैं। कामेश्वर, नाद-शम्भु, सदा-शिव, महेश्वर और रुद्र–ये पाँचों 'शिव' नामवाले हैं। जब ज्ञानी-जन ब्रह्म-निष्ठा में लीन होते हैं, तब उनका मन एकीभूत ब्रह्म (अखण्ड ब्रह्मानन्द) में मग्न हो जाता है। यह ब्रह्माकार-वृत्ति और कामेश्वरी भी ललिता ही हैं।'

'इस प्रकार परम शिव और हम जैसों द्वारा उपासिता ललिताम्बिका–सच्चिदानन्द ब्रह्म ललिताम्बिका हैं। ये ललिताम्बिका–महा-शम्भु के महा-योग से प्रादुर्भूत होकर श्रीचक्र-राज के रथ पर आरूढ हुईं और अपने चार हाथों में इक्षु-दण्ड (ऊपरी बाँयाँ हाथ), पञ्च-पुष्पों के वाण (ऊपरी दायाँ हाथ), रस्सी का पाश (बाँयाँ निचला हाथ) और अंकुश (दायाँ निचला हाथ) धारण किए निरन्तर षोडश-वर्षीय अवर्ण्या सुन्दरी के स्वरूप में सुशोभित हुईं। जब ललिताम्बिका अपना स्वरूप प्रकट करती हैं, तब उनके सिंहासन को चार पायों के रूप में ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और महेश्वर वहन करते हैं तथा सदा-शिव उनके विराजने के लिए पर्यङ्क-रूप में परिणत हो जाते हैं। छत्तीस तत्त्व ही उनके सिंहासन तक पहुँचने के ३६ सोपान हैं।'

***

(क्रमश:)

उपयोगी पुस्तकें

भगवती शतक	५)
भक्ति-योग	५)
भगवती मानस-पूजा-स्तोत्र	१०)
भागवत धर्म का प्राचीन इतिहास	१५)
भैरवी-चक्र-पूजन	६)
मन्त्र-कल्पतरु, पुष्प-१, २	७०)
मन्त्र-सिद्धि का उपाय	६)
मन्त्र-कोष	३००)
मन्त्रात्मक-सप्तशती (सजिल्द)	५००)
महा-विद्या स्तोत्र	१०)
महा-गणपति साधना	३५)
मुद्राएँ एवं उपचार (सचित्र)	२५)
महा-शक्ति-पीठ विन्ध्याचल	२०)
मन्त्र-योग	५)
रमा-परायण	३५)
राम अङ्क	१०)
राज-योग	५)
रास-लीला-विज्ञान	१०)
ललिता-महा-त्रिपुर-सुन्दरी-पूजा	२५)
ललिता-सप्तशती	४५)
लेख-संग्रह-स्वामी दिव्यानन्द जी	५)
लघु चण्डी	१५)
वन्दे मातरम्	५)
वैदिक देवी-पूजा पद्धति	५)
वाम-मार्ग	(यन्त्रस्थ)
विशुद्ध चण्डी (श्रीदुर्गा-सप्तशती)	२५)
विज्ञान-योग	५)
शाबर-मन्त्र-संग्रह (बारह भाग)	३८५)
शाक्त धर्म क्या है?	१५)
शत-चण्डी-विधान	२५)
शिव-शक्ति-अङ्क	५०)
श्रीचक्र-रहस्य	२०)
श्रीविद्या-स्तोत्र पञ्चकम्	३५)
श्रीविद्या-सपर्या-वासना	१००)
श्रीत्रिपुरा महोपनिषद्	६)
श्री विद्या-साधना (५ पुष्प)	२००)
सप्तशती तत्त्व	३०)
सम्पादक के संस्मरण	५०)
साधक का संवाद	२५)
सौन्दर्य-लहरी	१५)
सौन्दर्य-लहरी के यन्त्र-प्रयोग	२०)
सार्थ सौन्दर्य-लहरी	८०)
सप्त-दिवसीय सप्तशती-पाठ	३५)
सम्पुटित सप्तशती	४५)
सविधि श्रीरुद्र-चण्डी	१०)
सांख्यायन तन्त्र (हिन्दी सारांश सहित)	१००)
साधना-रहस्य	५०)
सार्थ चण्डी (श्री दुर्गा सप्तशती)	२५०)
स्वर-विज्ञान	७५)
हवनात्मक सप्तशती	१००)
हठ-योग	५)
हिन्दी कुलार्णव तन्त्र	१००)
हिन्दी कौलावली-निर्णय	२५)
हिन्दी महा-निर्वाण तन्त्र	१५०)
हिन्दी शाक्तानन्द-तरङ्गिणी	१५)
हिन्दुओं की पोथी	२५)
होलिका-महिमा एवं पूजन-विधि	५)
होमेज टू एनसेस्टर्स (पितृ-पूजा)	२०)
आगमोक्त योग-साधना (अंग्रेजी में)	५)

'चण्डी'-पुस्तक-माला द्वारा प्रकाशित

उपयोगी नवीन प्रकाशन

आदि-सम्पादक

'कुल-भूषण' पण्डित रमादत्त शुक्ल

१. श्री श्रीविद्या-खड्ग-माला
२. श्रीबगला-साधना (पुष्प १)
३. साधना-रहस्य
४. नव-ग्रह-साधना
५. हिन्दी कुलार्णव तन्त्र
६. हिन्दी महा-निर्वाण तन्त्र

मँगाने के लिए सम्पर्क करें :
श्री चण्डी-धाम, कल्याण मन्दिर प्रकाशन
अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६
दूरभाष : ०५३२-२५०२७८३, ०९४५०२२२७६७